निर्दोष कन्या

(एक सामाजिक उपन्यास)

मूल लेखिका—
श्रीमती प्रभावती देवी सरस्वती

मूल बंगला से अनुवादक—
विश्वनाथ वैशम्पायन

१९५५
सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली

प्रकाशक—
सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली

मूल्य १॥।)

मुद्रक—
कान्तीप्रसाद शर्मा
मनमोहन प्रिंटिंग प्रेस
गली छीपीवाली, नई सड़क, दिल्ली

दो शब्द

बंगाल में जहां रवींद्रनाथ टैगोर और शरद्चन्द्र चट्टोपाध्याय जैसे महान साहित्यकार हुए वहाँ उच्च कोटि की लेखिकाएं भी अनेक हुई हैं। प्रभावती देवी सरस्वती का नाम इन लेखिकाओं की पंक्ति में अग्रगण्य है। इन्होंने अनेक उपन्यस लिखे हैं। और विशेषत: इनके उपन्यासों का विषय गार्हस्थ्य जीवन और समाज ही रहा है। उस में भी समाज में नारी के प्रति जो अत्याचार हो रहे हैं उनके प्रति उनकी लेखनी विद्रोह करती दिखाई देती है। इसके लिए उन्होंने समाज को बहुत बुरा भला कहा है और साथ ही उन्होंने इसको दूर करने के उपाय भी बताए हैं।

'आयुष्मती' उनके ऐसे ही उपन्यासों में से एक है। 'आयुष्मती' में नारी की जिस समस्या को लेकर उन्होंने पाठकों के सामने रखा है और उस से होने वाले दुष्परिणाम को जिस प्रकार उन्होंने चित्रित किया है उसे पढ़ते पढ़ते हम यह अनुभव करने लगते हैं कि वह सबकुछ सत्य है और वह आज भी हमारी आखों के सामने हो रहा है। आचार विचारों का आडम्बर, छुआछूत का ढकोसला माता पिता के दोषों के लिये संतान को उत्तरदायी ठहराना ये सब आज भी समाज के ठेकेदार कर रहे हैं। समाज के मुठ्ठी भर लोग समाज को अपनी निजी जागीर समझ कर उसे किस प्रकार उंगलियों पर नचाना चाहते हैं ये सारी बातें इस उपन्यास में श्रीमती प्रभावती देवी सरस्वती ने स्पष्ट रूप से चित्रित की हैं। एक बार पुस्तक हाथ में लेने पर इसे समाप्त किये बिना इसे हाथ से रखने की इच्छा नहीं होती।

'निर्दोष कन्या' आयुष्मती का मूलानुवाद है। हिंदी पाठकों की सुविधा के लिये ही हमने इसका नाम आयुष्मती से 'निर्दोष कन्या' किया जिस से हिन्दी पाठकों के लिये वह सहज और सुलभ हो।

इस विषय में और कुछ कहना व्यर्थ है। कारण हीरे को यह कहना कि 'देखिये यह हीरा है' उसका उपहास करना है। मगर हीरे को हीरा यदि कोई व्यक्ति नहीं कहता तो वह हीरे का दोष नहीं वह व्यक्ति का दोष है।

विश्वनाथ वैशम्पायन

निर्दोष कन्या

—:o:—

(१)

"पवित्र—"

पुकारने का शब्द इतना गम्भीर था कि पवित्र चौंक उठा। इसका उत्तर देना उचित है या अनुचित यह बात सोचने का भी उसे अवकाश न मिला।

इस शान्त स्निग्ध सुन्दर ज्योत्स्ना युक्त रात्रि में वह यह शब्द सुनने के लिए तैयार न था। निर्जन शान्त, चन्द्रकिरणों से सिंचित अट्टालिका पर दूर से आते हुए 'पीहू,' 'पीहू' शब्द और मन्द २ बहने वाले वासन्तिक बयार के सुकोमल स्पर्श से वह थोड़ी देर के लिए अपना अस्तित्व ही भूल बैठा था। कल्पना दृष्टि से न जाने कैसे २ जागृत मधुर स्वप्न वह देख रहा था। आशा-पटल पर विचार की मोहमय तूलिका से वह नाना प्रकार के चित्र आँक रहा था। सहसा इस कठोर और गम्भीर आवाज को सुनकर उसकी मोहमयी तूलिका हाथ से छूट पड़ी। उसके स्वर्ण स्वप्नों का मोहजाल छिन्न भिन्न हो गया। क्षण भर में ही उसे रजनी का उज्ज्वल हास्य अन्धकार मय प्रतीत होने लगा।

वह तो जानता था कि अन्याय उसी का है। यह भी वह समझता था कि इसके लिए एक न एक दिन यह गम्भीर पुकार सुननी पड़ेगी और उसके लिए उसे हृदय को भी कठोर बनाना पड़ेगा।

सुन्दर ज्योत्स्ना और पक्षियों का कलरव केवल कवि के कल्पना जगत में ही शोभा पाते हैं। वास्तविक जगत में तो केवल इन्हीं वस्तुओं से काम नहीं चल सकता। उसे भी संसार चक्र के साथ घूमना होगा और आपदाओं का सामना करना होगा। उस दिन पक्षियों का स्वर उसे अत्यन्त कटु प्रतीत होगा, चन्द्रोदय होने पर भी समस्त दिशाएं अंधकार-मय दृष्टि गोचर होंगी।

हां, वास्तव में अन्याय उसी ने किया है। उसके सम्मुख विपत्ति प्रत्यक्ष खड़ी है। सिर पर एक गुरुतर भार है फिर भी वह उस शान्त-स्निग्ध शीतल चांदनी में पपीहे का मधुर स्वर सुनने में तल्लीन और निश्चिन्त हो आनन्द अनुभव कर रहा है क्या यह उसकी मूर्खता नहीं है ?

"पवित्र—"

नहीं, बस अब इस प्रकार बैठे रहने से काम न चलेगा। पुकार पर पुकार आ रही है, उसका उत्तर देना ही होगा मन ही मन ऐसा निश्चय कर उसने अपनी समस्त जड़ता को दूर कर उत्तर दिया "आता हूं।"

परन्तु पैर आगे बढ़ने से जवाब दे रहे थे। मानों आगे बढ़ते ही पवित्र गिर पड़ेगा। विपत्ति आएगी, यह जानते हुए भी दिन व्यतीत हो जाते हैं। उसका आना निश्चित

होने पर भी व्यग्रता से केवल उसकी प्रतीक्षा में बैठा जा सकता है। परन्तु जब सिर पर ही आ पड़ती है तो मनुष्य तुरन्त ही उसका कुछ न कुछ निपटारा कर देने के लिए बाध्य हो जाता है।

भवशंकर मुखोपाध्याय अपने कमरे में अकेले बैठे हुए धूम्रपान कर रहे थे। इस समय उनका इस प्रकार अपने कमरे में बैठना आश्चर्य का विषय था। कारण जमींदार महाशय दिन भर तो काम में लगे रहते और रात्री को बारह बजे तक मित्रों में गप लगाते रहते थे। इसी कारण पवित्र की उनसे भेंट न हो सकी थी। परन्तु आज वे गम्भीर हो इस समय अपने कमरे में बैठे हुए थे क्या यह आश्चर्य जनक घटना नहीं? उनकी उस गम्भीरता का कुछ भाव पवित्र को बुलाने के गंभीर स्वर से स्पष्ट प्रकट हो रहा था।

जिस समय पवित्र ने कमरे में प्रवेश किया उस समय उसके हाथ पैर थर थर कांप रहे थे, सुन्दर मुख पीला पड़ गया था। पिता की ओर एक बार दृष्टि उठाकर भी देखने का साहस उसमें शेष नहीं था।

वास्तव में भवशंकर बाबू गम्भीर प्रकृति के मनुष्य थे। वे अधिक नहीं बोलते थे। उनका ख्याल था कि अधिक बोलने से मर्यादा नष्ट होती है।। हां, केवल अपने बन्धुओं के सम्मुख वे किसी प्रकार भी इस कठोर नियम का पालन नहीं कर पाते थे।

"आगए पवित्र—यहाँ बैठो एक बात करनी है।"

बात क्या करनी है, इसे पवित्र अच्छी तरह जानता था।

भय से उसकी छाती धड़क रही थी। आखिर किसी तरह वह फर्श पर कमरे के एक कोने में सिमट कर बैठ गया।

कई क्षणों तक भवशंकर बाबू तमाखू पीते रहे। जब चिलम एक दम ठंडी हो गई तो नौकर ने आकर हुक्के पर दूसरी चिलम चढ़ा दी।

तमाखू पीते २ भवशंकर बाबू ने पूंछा "इम्तहान हो गया तुम्हारा ? पर्चे कैसे हुए ?"

पवित्र को घर आए हुए आज पांच सात दिन हो चुके थे परन्तु अभी तक पिता को पुत्र से यह प्रश्न पूंछने का भी अवसर न मिला था। पुत्र भी तो पिता से दूर दूर ही रहता था।

नीचा सिर किए हुए उसने उत्तर दिया "पर्चे अच्छे ही किए हैं। सभी कहते हैं कि पास हो जाऊंगा।"

'हूं।' यह कहकर भवशंकर बाबू तनिक देर चुप रहे और पवित्र भी नीचा सिर किए हुए चुपचाप बैठा रहा। केवल इतनी ही बात पूंछने के हेतु पिता ने नहीं बुलाया है, एक बात और भी है जिसे वह स्वयं अच्छी तरह जानता है। इस विचार के मस्तिष्क में आते ही उसका हृदय जोर जोर से धड़कने लगा।

भवशंकर बाबू ने हुक्के की निगाली एक ओर करते हुए गम्भीरता से कहा "एक बात तुमने मुझ से अब तक छिपाई है। इस बात से मेरा क्या तात्पर्य है इसे तो तुम भली प्रकार समझ ही रहे हो ? क्यों ?

पवित्र चुप।

भवशंकर बाबू ने गरज कर कहा "उत्तर दो, बताओ, क्या तुमने विवाह किया है? यह बात तुमने मुझे अभी तक क्यों नहीं बताई। चुप क्यों हो जी—बोलो—जवाब दो।"

पवित्र अपराधी की तरह नीचा सिर किए बैठा रहा। उसके मुख से एक भी बात न निकली।

"आज कल तुम बहुत लायक हो गए हो इसी कारण तो मुझे कुछ समझते ही नहीं। किन्तु जानते हो स्वयं अपने आपको योग्य समझ लेने से ही कोई योग्य नहीं कहलाता? तुम्हारी नकेल तो अब भी मेरे हाथ में है।" भवशंकर बाबू ने क्रूर दृष्टि से पुत्र की ओर देखकर कहा।

"मैं दोषी हूं पिताजी—" यह कह पवित्र उनके चरणों के निकट बैठ गया। "मुझे क्षमा कीजिए" उसकी आंखों से झर २ आंसू बहने लगे।

वह मातृहीन सन्तान था। अधिक समय पिता से दूर रहने पर भी पिता का समस्त स्नेह उसी पर था। उसने केवल एक ही बार दोष किया है, क्षमा याचना कर रहा है। इस कारण यह सुनते ही पिता का समस्त क्रोध उड़ गया। फिर भी उन्होंने कृत्रिम गाम्भीर्य दिखाते हुए कहा "हां" तुमने अपराध किया है और यह छोटा मोटा अपराध नहीं है जो केवल क्षमा याचना से ही भुला दिया जायगा। तुम जानते हो आज तुमने मेरी वंश मर्यादा को खिलौना समझ कर उसके साथ अपनी इच्छानुसार अनुचित व्यवहार किया है। लोग हंसते २ प्राण दे सकते हैं परन्तु अपनी वंश मर्यादा को किसी तरह भी पददलित नहीं होने देना चाहते। पर तुम—तुमने तो, एक उच्च वंश के एक मात्र कुल दीपक होते

हुए भी आज मेरे सम्मुख ही मेरे पूर्वजों की कीर्ति को कलंकित कर दिया।

गम्भीर मर्म वेदना से उनका कण्ठ विकृत हो गया। पवित्र ने एक बार आंख उठाकर पिता की ओर देखा और फिर उसने सिर नीचा कर लिया।

भवशंकर बाबू ने एक दीर्घ निश्वास लेकर कहा "जाने दो। अब इस विषय में तुमसे अधिक और कुछ कहना व्यर्थ है। तीर छूट चुका है अब वह वापस नहीं लौट सकता! लेकिन यह तो बताओ जिस के साथ विवाह हुआ है। उसे कहां छोड़ आये हो ?"

अर्धस्फुट स्वर से पवित्र ने उत्तर दिया "वहीं।"

"वहीं कहां ? कलकत्ते ?"

पवित्र ने उत्तर दिया "जी हां।"

तनिक भवें तानकर भवशंकर बाबू ने कहा 'क्या ऐसा करना उचित था ? आज या कल जाकर उसे यहां ले आओ। यह देखो तुम्हारे अजिया ससुर ने पत्र भेजा है। इसी से तो मुझे तुम्हारी यह बात मालूम हुई है।".

कांपते हुए हाथों से पवित्र ने पत्र ले लिया।

पिता ने धीर गम्भीर स्वरमें कहा 'सुनो, इस समय तुम्हारी तरुण अवस्था है। इस अवस्था में प्रायः मनुष्य को अपने हित अनहित को सोचने की विवेचना शक्ति नहीं रहती, वह एक स्वनिर्मित मार्ग का ही अवलम्बन करना चाहता है। एक दिन मेरी भी यही दशा थी और मैंने भी भावुकता वश— पर रहने दो इन बातों को। तुम से कहता हूं तुम विद्वान

हो। जिस ज्ञान से विद्या सार्थक कहलाती है उसी ज्ञान का आश्रय लेकर अपनी मनोवृत्तियों को पारमार्जित करो। प्रवाह में तिनके के समान मत बहो। मैंने तुम्हारा विवाह एक जगह ठीक किया था परन्तु तुमने मेरी समस्त आशाओं पर पानी फेर कर एक अपरिचित लड़की को अपनी जीवन-संगिनी बना लिया जिसके विषय में तुम यह तक नहीं जानते हो कि इसके पूर्व वह कौन थी, कहां से आई, और इसके पश्चात उसका क्या होगा? भावुकतावश तुम उसे अपना बैठे। जानते हो ऐसा भी हो सकता है—"

क्षण भर ठहर कर उन्होंने फिर कहना प्रारम्भ किया 'नहीं! मैं तो अब भगवान से यही प्रार्थना करता हूं कि तुम्हारा दाम्पत्य जीवन सुखमय हो। पहले तो मैं क्रोधित और दुखी हुआ था परन्तु अब तुम्हें आशीर्वाद देता हूं। अब तुम जा सकते हो परन्तु कल प्रातः काल तुम्हें उसे लेने जाना होगा। मेरी पुत्र वधू का पाक-स्पर्श संस्कार धूम से होगा, सुना।"

पवित्र चुपचाप कमरे से बाहर चला गया।

जाते हुए पुत्र के सुन्दर सुडौल शरीर को देखकर भवशंकर बाबू ने एक दीर्घ निश्वास छोड़ा। आज उन्हें अपनी स्वर्ग-गता पत्नी का ध्यान हो आया था।

यह बहुत दिनों की बात है। आज से तेईस वर्ष पूर्व छै मास के शिशु पवित्र को छोड़कर जब वह साध्वी इस संसार से चली गई थी उस समय से उमा ने ही उस शिशु को हृदय से लगाकर पाला था। पवित्र की यह छोटी मौसी उमा उस समय केवल १२ वर्ष की बाल विधवा थी। पति की मृत्यु के बाद आश्रय हीन होने के कारण ही दुखिया

उमा को अपनी बड़ी बहन का आश्रय ग्रहण करना पड़ा था।

नाते में मौसी होते हुए भी यदि देखा जाए तो वास्तव में पवित्र की मां उमा ही थीं। गर्भधारिणी मां उसे शिशु छोड़ गई थी। उमा ने ही उसे जगत से परिचित कराया। उसी के कारण पवित्र को जीवन दान मिला नहीं तो वह माता के साथ ही चल बसा होता।

आज उमा ही उनकी सब कुछ है। उसी की कार्य पटुता के कारण आज भवशंकर बाबू का संसार सुव्यवस्थित रूप से चल रहा है। उसकी अनुपस्थिति में वह एक दिन भी न चल सकता।

[२]

पवित्र ने जिस आंधी की आशंका की थी वह नहीं आई, यह देखकर वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ वास्तव में उसने विवाह भावुकतावश कर डाला? पूर्वी अत्यन्त सुन्दर है फिर भी वह स्वयं उसके सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जानता और न ही उसने कभी उसे जानने की आवश्यकता ही समझी। मित्रों ने इस विवाह में विघ्न डालने का प्रयत्न भी किया परन्तु इससे उस की जिद और भी बढ़ गई थी।'

पूर्वी के नाना अत्यन्त आनन्द के साथ कन्या दान कर निश्चिन्त हो गए। इस संसार में केवल नाना के अतिरिक्त पूर्वी का और कोई नहीं था। उसके माता पिता इस संसार

से कब प्रयाण कर गए थे इसकी उसे तनिक भी याद नहीं थी। जब से उसने होश सम्भाला वह नाना जी के सिवाय और किसी को जानती ही न थी।

पूर्वी ने विवाह की रात्री को ही पवित्र की ओर अच्छी तरह देखा था। उसकी अनिंद्य सुन्दरता को देखकर वह पुलकित हो उठी और अपने को खो बैठी और उसी क्षण उसके चरणों पर अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया।

विवाह के दूसरे ही दिन पवित्र पूर्वी से यह कह कर चला गया था कि वह घर जाकर पिताजी से समस्त घटना का वर्णन करेगा और फिर पूर्वी को आकर ले जाएगा। वह चार दिन पश्चात आने का वचन दे गया था, परन्तु चार दिन की जगह दस बारह दिन व्यतीत हो गये फिर भी पवित्र का कुछ पता नहीं था।

नातिन की मांग का सिंदूर देखकर वृद्ध जलधर दीर्घ निश्वास रोकने में जब सर्वथा असमर्थ हो गए तो उन्होंने पूर्वी से छिपा कर समस्त घटना, क्षमा याचना करते हुए अपने समधी को लिख भेजी।

पत्र भेज कर भी वे निश्चिन्त न हो सके उन्हें सन्देह होने लगा कि कहीं पता लिखने में तो उन्होंने भूल नहीं कर दी?

"पूर्वी बेटी—पवित्र ने जो अपना पता तुम्हें लिख दिया है उसे तनिक मेरे पास तो ले आओ।" वृद्ध ने पुकार कर कहा।

उस समय पूर्वी चूल्हा जला रही थी। उसने बाहर आकर पूंछा "क्या बात है नाना?"

जलधर बाबू ने कहा "पवित्र का पता तुम्हारे पास है न ?"
यह बात सुन पूर्वी के मुख पर लज्जा की लालिमा दौड़ गई। उसने तुरन्त ही अपने ट्रंक से पवित्र का पता लाकर नाना को दे दिया, और फिर अपने काम में लग गई।

पवित्र के साथ उसका विवाह थोड़े ही दिन पूर्व हुआ था पर इससे बहुत दिन पहिले ही से इन लोगों की उसके साथ घनिष्टता हो गई थी। इन वृद्ध महाशय और उनकी नातिन को वह सदा दया की दृष्टि से देखता आया है और समय २ पर उसने इनकी सहायता भी की है। कुछ अंश में इस दयाभाव से प्रेरित होकर ही तो एक दिन उसने पन्द्रह वर्ष की पूर्वी का पाणिग्रहण कर वृद्ध का गुरुतर भार हलका किया था।

चूल्हे में आग जलाते समय भी पूर्वी पवित्र की बात सोच रही थी पवित्र का ध्यान आते ही उसकी आंखों में आंसू भर आए।

"निष्ठुर—" बात स्वयं ही कहकर वह चौंक उठी। वह किसे निष्ठुर कह रही है—पवित्र को ? परन्तु आज तक इन लोगों के साथ पवित्र का जैसा व्यवहार रहा है उसे निष्ठुरता कहा जाय या असीम दया ? छी ! छी ! वह किसे निष्ठुर कह रही है—जो दयालु, कृपालु है उसे ?

स्वामी के उपकार की बात सोचते-सोचते उसके आंसू अन्तर्हित हो गये और नेत्र एक अनुपम ज्योति से चमक उठे। उसने दोनों हाथों से प्रणाम कर मन ही मन कहा "उन्होंने मेरे नाना को एक भारी जिम्मेदारी से बचाया है।

मुझे कुमारी से सधवा स्त्रियों की श्रेणी में स्थापित किया है। हे भगवान! उनका मंगल हो। वे मुझे ग्रहण करें या न करें मैं आजीवन उनके नाम की ही माला जपा करूंगी। एक क्षण भी उनके पवित्र नाम को न भूलूंगी।"

संध्या के पश्चात् वह रात्री के बढ़ते हुए अंधकार में छत पर घूमती हुई यही सोच रही थी "किसी सुदूर ग्राम में उसके चिरकांक्षित स्वामी का गृह है। थोड़ी देर में वह भवन भी शुभ्र चन्द्र के प्रकाश से जगमगा उठेगा। ग्राम की मुक्त वायु स्वच्छन्दता से इधर उधर अठखेलियां कर रही होगी। निर्मल आकाश के नीचे घने वृक्षों के पत्तों में पक्षी कलरव कर रहे होंगे और इस सुदूर कलकत्ते में—

"बेटी—मुन्नी—पूर्वी।"

"क्या है नाना ?"

नाना ने नीचे ही से पुकारा "एक बार इधर आकर देख तो ले कौन आया है ?" पूर्वी के मस्तिष्क में यह विचार उत्पन्न होते ही उसका शरीर पुलकित हो उठा पर उसी क्षण उसने अन्त में उठते आवेग को मन ही मन यों कह कर शान्त किया। "नहीं वे क्यों—? वे नहीं हैं। और कोई आया होगा इसी कारण नाना बुला रहे हैं।"

नीचे उतरते ही उसे एक और व्यक्ति का कण्ठ स्वर सुनाई दिया। यह स्वर उसका चिरपरिचित था। उसके हृदय के कोने २ में उसी की झंकार समाहित थी।

रात्री में पवित्र और पूर्वी का मिलन हुआ।

पवित्र ने पूछा 'चार दिन की जगह इतने दिन व्यतीत हो गए इस विषय में तुम क्या सोचा करती थीं पूर्वी ?'

पूर्वी ने सिर हिलाकर उत्तर दिया "कुछ भी नहीं।"

'कुछ भी नहीं?' पवित्र ने उसकी ठोड़ी पकड़ कर मुंह ऊपर उठाते हुए कहा "यह तुम एक दम झूठ कह रही हो पूर्वी? निश्चय ही तुम मुझे बदमाश और ठग समझती होगी।' क्यों, क्या झूठ कह रहा हूं?'

पूर्वी ने उसका मुंह अपने हाथ से बन्द करते हुए कहा "ऐसी बात न कहो, अपने मन में ऐसे अशुभ विचार उठने भी न दो। मैं क्या सोच सकती हूं। मैं तो एक अबला दरिद्री नारी मात्र हूं। तुमने मुझे दया कर स्त्री रूप में ग्रहण किया यह ही······"

'चुप २ बहुत बड़ाई न करो पूर्वी मुझे तुमसे अधिक तुम्हारी बातें प्यारी लगती हैं, इसका ध्यान रखकर बात करो।'

पूर्वी ने रुद्ध कण्ठ से कहा 'मार्ग की धूलि को सिर पर स्थान देने पर भी वह यह बात नहीं भूल सकती कि वह वही मार्ग की घृणित धूलि है और वह रहेगी भी वही। उसकी न तो सोने के समान दीप्ति ही हो सकती है और न ही वह सोने के भाव बिक ही सकती है। तुमने मुझे सादर ग्रहण किया है, क्या इसी कारण मैं यह भूल जाऊंगी, कि 'मैं कौन हूं?'

व्यग्र हो पवित्र ने उत्तर दिया 'बस, बस छोड़ो इन सब बातों को। तुम समझती होगी कि मैं स्वर्ण और मिट्टी की तुलना करने का इच्छुक नहीं फिर भी यदि तुम तुलना ही करना चाहती हो तो मेरी तुलना इतनी उत्तम वस्तु से न कर किसी निकृष्ट वस्तु से करो। मिट्टी राज मस्तक पर

सम्मान नहीं पाती, फिर भी उसकी शक्ति जो प्रजा है, उसी कृषक प्रजा के लिये मिट्टी कितनी आदर की वस्तु है, जानती हो ? इसी मिट्टी में कृषक धान उत्पन्न करता है और फिर उसी से यह प्रार्थना करता है कि आगामी वर्ष उसी मिट्टी में वह धूलि धूसरित हो जीवन धारण करने की सार्थकता प्राप्त कर सके।' ([illegible])

पूर्वी केवल विशाल अश्रु पूर्ण नेत्रों से स्वामी की ओर देखती रह गई—इतनी उत्तम उपमा के आगे फिर उसे एक क्षुद्र उपमा देने का साहस न हुआ।

पवित्र ने कहा 'अच्छा पूर्वी अब मेरे घर की बात सुनोगी या इन्हीं सब छोटी २ बातों में रात बिता दोगी ?'

धीर कण्ठ से पूर्वी ने पूंछा 'नाना ने सुना है...?'

'हां' नाना ने पत्र द्वारा पहिले ही समस्त बातें सूचित कर दीं यह एक तरह से अच्छा ही हुआ, क्यों न ? पिताजी के सम्मुख यह बात प्रकट करने का मुझे तो साहस नहीं हो रहा था। मैं एक भारी असमंजस में पड़ गया था इसका तुम अनुमान कर सकती हो पूर्वी। बाबा की वंश मर्यादा के विषय में ही मुझे अधिक भय था। मैंने सोचा था कि मेरे इस कृत्य से उनकी वंशमर्यादा समस्त नष्ट हो जायगी। वे किसी तरह मेरी इस धृष्टता को सहन न कर सकेंगे, किन्तु आश्चर्य की बात—उन्होंने इस बात को एकदम साधारण ही समझा।'

विस्मित हो पूर्वी ने पूंछा 'क्या कुछ भी नहीं कहा ?'

उत्साहित हो पवित्र ने उत्तर दिया 'एक दम कुछ नहीं।

पहले तो थोड़े क्रोधित हुए परन्तु बाद में तुम्हें ले आने की उन्होंने आज्ञा देदी। तुम्हारा मेरे साथ विवाह हुआ है इतने बड़े सम्माननीय वंश की तुम एक मात्र पुत्र वधू हो, यह बात अत्यन्त समारोह के साथ संसार जाने, यही एक मात्र उनकी अब इच्छा है।'

पूर्वी की आंखें प्रसन्नता से चमक उठीं वह सोचने लगी "तो फिर वह स्वामी गृह में प्रवेश करने की अनुमति पा चुकी है। उसकी इतने दिनों की प्रार्थना नारायण ने सुन ली और उसका फल आज उसे प्राप्त होगया।'

भावावेश में उस रात न जाने वह कितनी बातें कह गई। पूर्वी आज जैसी मुखर जीवन में कभी नहीं हुई थी।

"नाना से मुझे ले जाने के विषय में तुमने कुछ कहा है क्या ?"

सिर हिलाते हुए पवित्र ने उत्तर दिया 'जल्दी के कारण यह बात कहने का अवसर ही न मिला। प्रातः काल उन से यह बात अवश्य कहूंगा।'

दूसरे दिन पवित्र ने जलधर बाबू से कहा 'पिता जी ने मुझे बिदा करा लाने के लिए भेजा है।'

उस समय वृद्ध एक जीर्ण बही खाता देख रहे थे उन्होंने धीर गम्भीर कण्ठ से पूंछा 'किसे, पूर्वी को ?'

पवित्र ने उत्तर दिया 'जी हां।'

जलधर बाबू ने पूंछा 'तुम्हारे पिता ने अनुमति दे दी

है ? तुमने उनकी इच्छा के विरुद्ध विवाह कर लिया इस कारण क्या वे क्रोधित नहीं हुए ?'

पवित्र ने संक्षेप में उत्तर दिया 'नहीं।'

'यह सुनकर मुझे प्रसन्नता हुई। ले जाओगे—अच्छा, तो ले जाना इस में मुझे क्या आपत्ति हो सकती है भाई ! तुम्हारी वस्तु है, तुम उसका जो चाहो सो कर सकते हो। आज तक मैंने उसे पाला-पोसा है, मेरी ही गोद में खेल कर वह इतनी वड़ी हुई है। प्रारम्भ में—तनिक कष्ट तो होता ही है। फिर—'

और उनकी मलिन आंखों में आंसू भर आये। तनिक मुंह नीचा कर उन्होंने शीघ्रता से आंखें पोंछ कर कहा 'ठीक तो है, क्या इस से भी अधिक और कोई आनन्द की वात हो सकती है ? और इस से अधिक सुख की आशा भी कौन कर सकता है।' यह कहते २ वे हंस पड़े परन्तु इस हंसी के मूल में क्या रहस्य छिपा है—यह पवित्र अच्छी तरह समझ रहा था, इसी कारण वह नीचा सिर किए चुपचाप खड़ा रहा।

पूर्वी को विदा करने के लिए वृद्ध नाना अत्यन्त व्यस्त थे। दुकान २ घूम कर बक्स, साबुन, कपड़े इत्यादि वस्तुएं वे खरीद रहे थे। सिंदूर से लेकर कांटा, कंघी तक कोई भी वस्तु उन्होंने बाकी न छोड़ी।

वे यह सब चीजें खरीदते जाते थे और बार २ आंखें पोंछते जाते थे। रह २ कर उन्हें यही खयाल आता था कि जिसे पन्द्रह वर्ष तक कभी एक क्षण भी आखों की ओट नहीं होने दिया वह आज चली जाएगी और फिर न जाने कब लौटे ?

दो पहर को कोई बारह बजे के करीब दो कुलियों के सिर पर सामान लदवा कर हांफते २ जलधर बाबू घर पहुँचे।

जल्दी २ पूर्वी ने उनके हाथों से सामान लेकर घर में रक्खा और कुलियों से भी सामान अन्दर रखवा दिया। जलधर बाबू हंसते हुए उसे प्रत्येक वस्तु दिखा दिखा कर समझाने लगे।

व्यर्थ ही इतने धन का व्यय देख कर पूर्वी क्रोधित हो बोली 'अच्छा नाना! इतने रुपये खर्च करने की क्या आवश्यकता थी?'

नातिन की यह भर्त्सना सुनकर वृद्ध का प्रफुल्ल मुख सूख कर जरा सा हो गया। वे तनिक झिचकिचाते हुए बोले 'तू चली जाएगी बेटी एक दम खाली हाथ, वहां एक गरीब की लड़की के समान जा पहुँचेगी। क्या यह अच्छी बात होगी? इसी कारण तो थोड़ी सी चीजें खरीद लाया हूं। मैं ऐसा ही अभागा हूं नहीं तो क्या आज तुम्हें केवल कांच की चूड़ियां ही पहना कर भेजता। यह छोटा सा घर और बीस रुपये महीने की पेन्शन यही तो गरीब की पूंजी है। और-'

क्रोध भरे स्वर में पूर्वी ने कहा 'हां इसीलिये तो आज साठ सत्तर रुपये पर पानी फेर दिया। नाना! बीस रुपये पेन्शन से थोड़ा-थोड़ा बचा कर जो कुछ जोड़ा था वह सारी पूंजी आज तुमने खर्च कर डाली। कहो तो, इसके बाद तुम्हारा क्या होगा?'

वृद्ध महाशय अपने केश शून्य सिर पर धीरे २ हाथ फेरते हुए मानो मन ही मन गुनगुनाने लगे 'अगले मास

बीस रुपये तो फिर मिलेंगे ही। अकेले आदमी का क्या है? एक वक्त आलू भात दूसरे वक्त—जो कुछ हो खाकर—'

उनके मुख की ओर देखकर हठात् पूर्वी रो पड़ी और फिर धीरे २ वहां से चली गई।

इसी प्रकार दोपहर बीत गई। सन्ध्या की गाड़ी से उन्हें जाना था। इस कारण जल्दी ही घर से रवाना होना चाहिये।

नाना से बिदा होते समय पूर्वी फूट २ कर रोने लगी। अति कष्ट से अपने को संभाल कर पूर्वी को हृदय से लगाते हुए विकृत कण्ठ से वृद्ध महाशय बोले 'रोती क्यों हो बेटी। लड़कियों को तो एक न एक दिन पति गृह जाना ही पड़ता है। यह तो बड़े सौभाग्य की बात है। मैं हृदय से आशीर्वाद देता हूं कि समस्त जीवन स्वामी गृह में तुम सुख से रहो। किसी दिन कलंक की कालिमा तुम्हें कभी भी स्पर्श न कर सके।'

पूर्वी ने गद् गद् कण्ठ से कहा 'नाना क्या तुम वहाँ नहीं आओगे?'

पीछे से पवित्र व्यग्र हो बोला 'आप अवश्य आइयेगा नाना जी! बहू भात के समय पिता जी आपको निमन्त्रण भेजेंगे।'

'आऊंगा—निमंत्रण मिलते ही अवश्य आऊंगा।'

जब तक वे दोनों दिखाई देते रहे वृद्ध उनकी ओर शून्य दृष्टि से देखते रहे उसके पश्चात जलधर महाशय बिस्तरे पर जा लेटे। उस दिन वे एक दम नहीं उठे। रात्री को कुछ भी भोजन न किया। यहां तक कि उनका प्रिय हुक्का भी निराश हो एक कोने में पड़ा रहा। आज उसकी ओर दादू ने देखा तक नहीं।

[३]

नई बहू आई है इस कारण केवल घर में ही नहीं समस्त ग्राम में यही एक चर्चा है। इस विचित्र विवाह की नायिका नव वधू को देखने के लिए ग्राम भर की स्त्रियों के दल के दल आ रहे थे।

जमीदार के एकलौते बेटे का इस प्रकार चुपचाप विवाह हो जाना वास्तव में सभी के लिए आश्चर्य का विषय था।

राममय मुखोपाध्याय गुड़ गुड़ी के एक दो सड़ाके खींच-कर सिर हिलाते हुए बोले 'हूं! निश्चय ही कुछ दाल में काला है। नहीं तो क्या इस तरह होता? इस तरह लुक छिप कर —किसी को कानो कान खबर नहीं? अच्छा ठहरो, पर मैं भी पता लगा कर छोड़ूंगा। यदि ऐसा न कर सकूं तो मेरा नाम राममय मुखोपाध्याय नहीं।'

गांव के वृद्ध भी भगवान की विचित्र सृष्टि का एक नमूना होते हैं। इनके उर्वर मस्तिष्क में अनेक ऊल जलूल बातें बीज रूप में स्थान पाकर धीरे २ वृक्ष रूप धारण कर लेती हैं।

राममय ऐसा क्यों कर रहे थे इसका एक कारण था। जमीदार भवशंकर बाबू के साथ वे दो चार मुकदमे हार चुके थे; इस कारण भी वे उन्हें फूटी आंखों भी नहीं देख सकते थे। एक दिन राममय भी काफी बड़े जमीदार थे। गांव के पुराने लोगों के मुंह से सुना है कि दस बारह पीढ़ी पूर्व ये सब एक ही घराने के थे। परन्तु आपस के झगड़ों ने इन्हें इस दशा पर पहुँचा दिया।

दिन पर दिन अभाग्यवश राममय हारते ही जाते थे और हार के साथ २ आपस का वैमनस्य भी बढ़ता जाता था। इस समय वे भवशंकर बाबू की कोई त्रुटि खोजने में व्यस्त थे। जिस प्रकार हो भवशंकर बाबू को समाज के सम्मुख अपमानित करना ही उनका एक मात्र उद्देश्य रह गया था। फलतः इसी गुप्त विवाह का रहस्य उद्‌घाटन करने के लिए राममय मुखोपाध्याय कटिबद्ध हो गए। इस धुन में उन्हें खाना पीना भी भूल गया।

उमा पवित्र को पत्नी को पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुई। आनन्दातिरेक के कारण उनकी आंखों से अश्रु बहने लगे। मन ही मन स्वर्गगता पूज्य भगिनी के प्रति उन्होंने हाथ जोड़ कर प्रणाम किया।

पहले उन्होंने पूर्वी और पवित्र को ठाकुर द्वारे में ले जाकर प्रणाम कराया। उसके पश्चात् दोनों को भवशंकर बाबू के शयन गृह में ले जा कर दीवार पर टंगे हुए अपनी बहन के चित्र को दिखाते हुए वाष्परुद्ध कंठ से वे बोलीं 'इन्हें प्रणाम करो पवित्र! बेटी पूर्वी तुम भी इन्हें प्रणाम करो।'

पवित्र विद्रोही हो बोला 'क्यों ?'

विस्मित हो उमा ने कहा 'ओ क्या, तू पागल हो गया है क्या ? ये तुम्हारी पूज्य मां हैं। इन्हें प्रणाम न करोगे ?'

पवित्र उमा के शान्त स्निग्ध मुख की ओर न देखकर आवेग में बोला 'यह मुझे तुम भूल समझा रही हो माँ। मेरी मां तो केवल तुम्ही हो। तुम्हें छोड़ कर मेरी इस संसार में और कोई माँ नहीं है। चित्र को प्रणाम कर क्या मुझे शांति

मिलेगी ? मैं तो पहले तुम्हारे ही चरणों की धूलि ग्रहण करूंगा।'

और झुककर पवित्र ने उमा की चरणों की रज ली।

'छी ! छी ! बेटा ! अरे यह क्या कर रहे हो ?' यह कहते कहते उमा ने उसका सिर अपने हृदय से लगा लिया और अश्रु, समस्त बन्धनों की अवहेलना कर पवित्र के मस्तक पर गिर पड़े।

'अरे मैं तो तुम्हारी मौसी हूं ये तुम्हारी मां है, मेरी पूज्य बहन। अच्छा पागल तुम इन्हें मेरी बड़ी बहन समझ कर ही प्रणाम करो। इस में तो तुम्हारा कुछ नुकसान नहीं है।'

पवित्र ने सिर हिला कर उत्तर दिया 'नहीं इस में मुझे कुछ भी आपत्ति नहीं। मैं प्रणाम करता हूं। किन्तु केवल तुम्हारी बड़ी बहन के नाते अपनी माँ समझ कर नहीं।'

वर वधू ने प्रणाम किया।

पुत्र और पुत्र वधू आए हैं यह सम्वाद सुन कर भी धीर प्रकृति भवशंकर बाबू तनिक भी उतावले नहीं हुए। मन तो उनका अवश्य चंचल हो उठा था परन्तु वे अबाध्य मन का तिरस्कार कर समस्त कार्य समाप्त होने के पश्चात् निश्चित समय पर ही अन्तःपुर में जाने को प्रस्तुत हुए।

दिवान वनमाली राय ने कहा 'पवित्र बाबू प्रातःकाल ही बहू को ले आए हैं। इस समय तो एक बज रहा है इतने समय में एक बार बहू का मुख देखने की भी फुर्सत आपको न मिली बाब ?'

उन्हें झिड़कते हुए भवशंकर बाबू ने उत्तर दिया 'पवित्र बहू ले आया है तो अच्छा ही हुआ। इस के लिए क्या मैं काम छोड़ कर बच्चों की तरह बहू देखने दौड़ा जाऊं ? वह तो घर में ही है कहीं भागी तो नहीं जाती ?'

झिड़की खाकर वनमाली राय बड़बड़ाते हुए वहां से चले गए। बचपन से ही वे इस संसार में रह रहे हैं। आजीवन कुमार व्रत पालन करने का उन्होंने निश्चय कर लिया है समस्त स्त्री जाति को वे माँ के समान मानते है। सभी उन्हें छेड़ते हैं– विधाता वनमाली राय के भाग्य में विवाह लिखना भूल गया।' बात भी सच ही थी, नहीं तो पचास वर्ष की अवस्था हा जाने पर भी वे अविवाहित क्यों रहते ?

पवित्र को वनमाली राय स्नेह की दृष्टि से देखते थे। अन्तःपुर में उमा मौसी से उसे मातृ स्नेह प्राप्त हुआ था। तो वनमाली राय से पितृस्नेह। वनमाली राय की सदा यही इच्छा रहती है कि पवित्र दस आदमियों के बीच सम्मान प्राप्त करे। उसी पवित्र ने विवाह कर लिया है। बहू घर आ गई है इसी कारण वनमाली राय का हृदय हर्ष से बल्लियों उछल रहा है।

आनन्दातिरेकवश जो भी व्यक्ति उनके सामने पड़ जाता उसी को वे शुभ सम्वाद सुना देते कि पवित्र बहू लेकर आ गया है। यदि यह कहा जाय कि उन्होंने ही यह समाचार समस्त गांव में फैलाया तो अतिशयोक्ति न होगी।

गांव के लोग आकर बहू देख गए। परन्तु पवित्र के पिता को जमींदारी के काम से इतनी फुर्सत न मिल सकी कि वे पुत्र वधू का मुख देख आवें। वनमाली राय छट पटाते रहे।

वे मन ही मन न जाने क्या २ कहने का विचार कर चुके थे परन्तु भवशंकर बाबू की मुखाकृति देखते ही उनके वे समस्त विचार न जाने कहां विलीन हो गए।

अन्तःपुर में प्रवेश करते ही भवशंकर बाबू ने पुत्र वधू का मुख देखा। पास ही खड़ी उमा उत्सुकता से उनके मुख की ओर देख रही थी। किन्तु भवशंकर बाबू ने कुछ भी न कहा और न अपना मत ही प्रगट किया। मुख निर्विकार था। वास्तव में भवशंकर एक विचित्र प्रकृति के मनुष्य थे।

नित्य नियमानुसार भवशंकर बाबू भोजन करने के पश्चात् एक घंटा आराम कर बाहर चले गए। वहां दीवान जी से उन्होंने कहा 'बहुत सा सामान खरीदने के लिए तुम्हें कलकत्ते जाना होगा। आगामी रविवार को सभी समाज को भोज देना है इसकी क्या व्यवस्था हुई है ?'

सिर हिलाकर बनमाली राय ने उत्तर दिया 'अभी तक तो कुछ भी नहीं हुआ।'

'कुछ भी नहीं हुआ ?' तीक्ष्ण स्वर से भवशंकर बाबू ने कहा, 'वाह दीवानजी ! इन सब बातों में तो तुम्हें मुझ से अधिक अक्ल होनी चाहिए, पर इस समय तुम्हारी वह सब बुद्धि कहाँ नष्ट हो गई। देख रहे हो कि पवित्र विवाह कर बधू घर ले आया है—उसने चुपचाप विवाह अवश्य कर लिया है फिर भी जो लड़की हमारी पुत्र बधू होकर आई है उसे समाज से परिचित करा देना तो अब हमारा ही काम है, पवित्र का नहीं। पाक स्पर्श तो कराना ही होगा जिस से समाज जान जाए कि पवित्र का विवाह हो गया है। इस विधि को विशेष

समारोह के साथ करने का मेरा विचार है। इसी कारण मैं सोच रहा हूं कि केवल भोज देने से ही काम न चलेगा हरेक व्यक्ति को एक रुपया तथा प्रत्येक घर में एक कलसा थाली और कटोरी आदि देने का मेरा विचार है। क्यों ठीक है न ?'

अत्यन्त प्रसन्नता के कारण वनमाली राय के मुख से एक भी अक्षर न निकला। परन्तु हर्ष प्रकाशित करने से तुरन्त ही, 'बचपन करते हो' भवशंकर बाबू की झिड़की खानी पड़ेगी, इसी कारण तो वे चुप रहे।

'जो आज्ञा। राममय बाबू के घर भी—'

भवशंकर बाबू ने कहा 'निश्चय ही वह आवे या न आवे परन्तु उसे निमंत्रण देना तो हमारा कर्तव्य है। अच्छा तो मैं लोगों की सूची तय्यार करता हूं। तब तक तुम भी समस्त कार्य समाप्त कर मेरे पास आओ।

इसके पश्चात् अल्प समय में ही लोगों की तालिक प्रस्तुत हो गई। उस में राममय बाबू का नाम भी बाकी न रहा।

उसी दिन प्रसन्नता पूर्वक वनमाली राय सामान खरीदने कलकत्ते चले गए।

[४]

बीच के कई दिन तय्यारी में यों ही बीत गए। आखिर रविवार का दिन भी आ पहुँचा।

गांव के सब लोग जमींदार के यहाँ निमंत्रण में आए हुए हैं। घर में हल्ला मचा हुआ है। पूर्वी के नाना भी आज प्रातःकाल कलकत्ते से आ पहुँचे हैं। अपनी पूर्वी की ससुराल वालों और श्वशुर इत्यादि से मिलकर वे अत्यन्त प्रसन्न हो रहे थे। वे घूम २ कर चारों ओर देख रहे थे और कभी कभी वनमाली बाबू भी आकर उनके इस कार्य में सहयोग दे जाते थे।

दो पहर के समय हंसते हुए वनमाली बाबू वृद्ध जलधर के पास आ बैठे। उस समय जलधर बाबू हुक्का पीते हुए इधर उधर देख रहे थे। एक ओर भद्र पुरुषों का जमाव था और दूसरी ओर समस्त राज्य के भिखारी आ जुटे थे। इस कारण पिछवाड़े में भी काफी शोर मचा हुआ था।

आकाश पर पतले बादलों का आवरण होने के कारण फाल्गुन का रौद्र तेज कुछ कम हो गया था। बाहर शामियाने के नीचे सैकड़ों आदमियों के हेतु भोजन की तय्यारी की गई थी। केवल लोगों के बैठने भर की देर थी।

एक बार आगे और एक बार पीछे की ओर देखकर जलधर बाबू ने पूछा 'क्या यह सब राजा बाबू की ही प्रजा है ?'

गर्व सहित हुक्के का एक कश खींचते हुए दीवान जी ने उत्तर दिया 'निश्चय ही।'

इस में कुछ मिथ्या का भी सम्मिश्रण था कारण अतिथियों में राममय बाबू की भी प्रजा थी। किन्तु वनमाली राय ने कई गांव के नामों का उल्लेख कर गर्व सहित कहा 'ये समस्त ग्राम हमारे सरकार के ही हैं।'

भोजन की समस्त तय्यारी हो चुकी थी। पत्तलें पड़ गई पर कोई भी बैठ नहीं रहा था। सब लोग एक, जगह खड़े होकर शोर मचा रहे थे। यह गोलमाल देखकर वन-माली बाबू उद्विग्न हो उठे। उन्होंने जलधर बाबू से कहा 'आप बैठिए मैं देख तो आऊं बात क्या है?'

वनमाली बाबू ने भीड़ के पास जाकर देखा कि राममय बाबू बीच में खड़े हैं।

'यह क्या? आप लोग सब खड़े क्यों हैं? चलिए, चलिए। राममय बाबू आप भी चलिए।'

गम्भीर हो राममय बोले 'मैं भोजन करने नहीं आया हूं।'

'आप भोजन करने नहीं आए हैं?'

वनमाली बाबू को कुछ शंका उत्पन्न हुई। उन्होंने पूछा 'तो फिर आप क्या करने आए हैं?'

उसी स्वर में राममय बाबू ने उत्तर दिया 'समस्त लोगों की जाति बचाने, उनके धर्म को अटल रखने के लिए ही आज मैं यहां आया हूं।'

'जाति, धर्म कैसे नष्ट होगा? हमारे घर भोजन करने से?'

पीछेसे ये शब्द सुन वनमाली बाबू ने घूम कर देखा भवशंकर बाबू खड़े थे और उनकी आंखों से क्रोध की ज्वाला निकल रही थी।

राममय बाबू ने भवशंकर बाबू के मुख पर दृष्टि गड़ाते हुए शांत स्वर से कहा 'हां , आप के यहां भोजन करने से लोगों का धर्म नष्ट हो जाएगा।'

भवशंकर बाबू क्रोधित हो कुछ कहने ही वाले थे, परन्तु फिर अपने को संभाल कर बोले 'आज से कुछ मास पूर्व ही तो पूजा के दिनों में समाज के लोग तीन दिन तक मेरे यहां भोजन करते रहे, उस समय उनका जाति धर्म कहां था ?'

स्थिर भाव से राममय बाबू ने उत्तर दिया 'नहीं उस समय उनका धर्म नष्ट नहीं हुआ, तब ऐसी कोई बात नहीं थी। परन्तु इस समय ऐसा ही कारण उपस्थित हुआ है। अतएव आपके यहां कोई भोजन नहीं कर सकता।'

'वह कौन सा कारण है।'

राममय बाबू ने उत्तर दिया 'यही कि आपके सुपुत्र ने एक वेश्या कन्या के साथ विवाह किया है इसीलिए समाज के लोग आपके यहां भोजन नहीं करना चाहते।'

'वेश्या कन्या ! राममय ! मुंह संभाल कर बात करो। तुम एक भद्र पुरुष की कन्या को अपमानित कर रहे हो। यह मैं कभी नहीं सहन कर सकता।'

भवशंकर बाबू क्रुद्ध हो उठे। उपस्थित लोगों पर एक आतंक छा गया। राममय बाबू इससे तनिक भी विचलित

न हुए। वे शांत स्वर से बोले, 'बिना प्रमाण के मैं किसी गृहस्थ कन्या को अपमानित नहीं करना चाहता। आपके साथ मेरा विरोध हो सकता है, परन्तु आपकी निर्दोष पुत्रवधू के साथ नहीं। मैं आपको इस सत्य घटना से अपमानित नहीं करना चाहता, मैं तो केवल वास्तविक घटना को लोगों के सम्मुख रखना चाहता हूं। सत्य को निर्भीकता पूर्वक कहने में कुछ भी दोष नहीं होता अन्याय के डर से सत्य को कभी छिपाना नहीं चाहिए। यदि कोई उसे छिपाने का प्रयत्न भी करे तो भी वह एक न एक दिन अपना वास्तविक रूप प्रकट कर देता है। उस पर चाहे हजारों झूंठ लाद दो फिर भी वह एक न एक दिन राख से ढके अंगारे की तरह स्पष्ट हो जाएगा।' बात समाप्त कर उसने मूछों पर हाथ फेरा। उसकी मुख मुद्रा को देख कर भवशंकर बाबू सचमुच ही डर गए। उनका मुख पीला पड़ गया।'

तीक्ष्ण दृष्टि से राममय बाबू ने भवशंकर बाबू के मुख की ओर देख कर कहा 'आज तीन दिन हुए मैंने यह बात सुनी थी और मैं तो यही सोचता था कि आप इसे जानते—'

खीझकर भवशंकर बाबू ने गरजते हुए कहा 'मैं जानता हूं ? और जान बूझकर मैं—'

हठात् वे नम्रता पूर्वक बोले 'आज तीन दिन से तुम्हें यह बात मालूम थी। फिर भी तुम ने मुझ से क्यों न कहा राममय ?'

तनिक बगलें झांक कर राममय ने उत्तर दिया 'हां, यह मेरी गलती अवश्य है, इसे मैं स्वीकार करता हूं। परन्तु कहिए तो यह बात मैं आपको कब सूचित करता ? कारण

उस के ज्ञात होने के पश्चात ही तो मुझे कलकत्ते जाना पड़ा था। आज प्रातः काल लौटते ही मैंने निमंत्रण की बात सुनी और साथ ही यह भी पता लगा कि आपने मुझ पर भी यह कृपा की है। इस कारण मैंने यही निश्चय किया कि वहीं समस्त बातें आप से कहूंगा। समाज में ऐसा अनाचार होते मैं नहीं देख सकता। हम हिंदू है। केवल एक धर्म के सिवाय हमारा शेप रह ही क्या गया है? एक एक कर हमने सभी बातों को तिलांजलि दे दी। केवल जाति का ही अव-लम्बन अब शेप है। यदि आज यह भी चली जाएगी तो फिर हमारे पास हिन्दुत्व का परिचय देने के लिए कुछ भी शेष न रहेगा। जाति—जानते हैं महाशय यह 'जाति' कितनी नाजुक वस्तु है—काँच के बर्तन के समान। लोहे के समान यदि यह कठोर होती तो फिर यह डर न रहता। संसार का कोई भी अनाचार इसे हिला न सकता। मैं ठीक कह रहा हूं न महाशय?'

राममय बाबू जाति और धर्म पर व्याख्यान देते रहे और उसे सुन २ कर भवशंकर बाबू क्रोध से जले जा रहे थे। राममय के संसार की कोई भी घटना उनसे छिपी नहीं थी। पवित्र यज्ञोपवीत गले में लटका कर, समाज के सम्मुख वंश मर्यादा और जाति गर्व को अक्षुण्ण रख कर जो कुछ व्यभिचार किए जा सकते थे वे राममय ने सब किए थे। आज वे समस्त बातें भवशंकर कह सकते थे परन्तु समय अनुकूल नहीं था। इस दोपारोपण के कारण उनकी शक्ति ही नष्ट हो गई थी।

एक बार उन्होंने सब लोगों की ओर देखा। लोग भोजन

करने आए हुए थे। उस समय वे सतृष्ण नयनों से बार २ परोसी हुई पत्तलों की ओर निहार रहे थे। क्योंकि भूख के कारण उन सब के पेट में चूहे कूद रहे थे। फिर भी क्षुधा और तृष्णा को दबा कर सब लोग यही कह रहे थे 'हां! यह बिलकुल ठीक बात है। जाति—बाप रे इसके सिवाय हमारा और है ही क्या? यदि हम जाति खो देंगे तो फिर हमारा जीना और मरना एक समान है।'

'हां! यह सत्य है। हिन्दू का कुछ और है ही नहीं गर्व करने योग्य जो कुछ भी था वह तो समस्त नष्ट हो चुका है हम हिन्दू अब जाति के सहारे ही जीवित हैं। इतना भयंकर व्यभिचार—क्या यह सोचने का विषय नहीं है?'

क्षण भर सोच कर भर्राई हुई आवाज से भवशंकर बाबू ने कहा 'पवित्र ने जिस के साथ विवाह किया है वह वेश्या कन्या है क्या इसका प्रमाण आप लोग दे सकते हैं?'

राममय बाबू ने कहा 'क्यों नहीं। केवल सुनी हुई बात पर प्रत्यक्ष प्रमाण के बिना विश्वास न करना चाहिए। हाँ, सुना है पवित्र के अजिया श्वशुर यहां आए हुए हैं उन्हें बुला भेजिए समाज के सम्मुख वे निश्चय ही सत्य न छिपा सकेंगे।

'अच्छा तो ऐसा ही हो—'

भवशंकर बाबू ने घूम कर पीछे की ओर देखा। पवित्र प्रस्तर मूर्ति की भांति खड़ा है। उसके शरीर का समस्त रक्त मानों जम गया था। 'आज उसके चिर गर्वित और माननीय पिता को समस्त समाज के सम्मुख इस प्रकार अपमानित होना पड़ रहा है। किसके कारण? उसी के कारण

तो !' यह विचार उसे रह रह कर अत्यन्त व्यथित कर रहा था।

'पवित्र—' पिता गरज उठे। 'जाओ—अपने लाड़ले अजिया ससुर को बुला लाओ।'

धीरे-धीरे पवित्र वहाँ से चला गया। भवशंकर बाबू लाल लाल आंखों से उसकी ओर ताकते हुए बोले 'नीच—' यह बात एक दीर्घ निःश्वास के साथ सहसा उनके मुख से निकल पड़ी।

वे चुप चाप खड़े होकर वृद्ध जलधर की बाट जोह रहे थे। 'गृह देवता दामोदार आज के इस भयंकर अपमान से अपने चिर सेवक की रक्षा करो। वृद्ध यह लांछना एकदम अस्वीकार कर दे। राममय की बात झूठ हो जाए। हे भगवन्! आज दास की लाज तुम्हारे हाथ है।'

इस समय जनता में काना फूसी हो रही थी और बीच में राममय बाबू निस्तब्ध खड़े थे। उनका मुख आनन्द से उत्फुल्ल हो रहा था और आंखों में विजय का गर्व था।

देखते ही देखते जलधर महाशय भवशंकर बाबू के सम्मुख आकर खड़े हो गए। पवित्र के मुख से जो दो चार बातें सुनी थी उसी से उनका मुख काला स्याह पड़ गया था। चलते समय दोनों पैर थर थर कांप रहे थे। थोड़ी देर वे चुप चाप खड़े रहे। दुःख और लज्जा के कारण भवशंकर बाबू ने अपने को सम्भाल कर कहा 'आप ने सुना ?'

जलधर महाशय का कण्ठ कांप गया—'हां।'

'क्या इसके विरुद्ध आप कुछ कहना चाहते हैं ? मैं आप से अपरिचित हूं केवल एक बार ही आपको तथा

आपकी नातिन को मैंने देखा है। पवित्र भी आप लोगों का विशेष परिचय नहीं जानता। बच्चा ही तो है। भावुकता वश, मुझे कुछ सूचित किए बिना ही, उसने विवाह कर लिया। अब आपको अपनी कैफियत स्वयं ही देनी पड़ेगी। हम नहीं दे सकते।'

क्षण भर ठहर कर उन्होंने कहना प्रारम्भ किया 'केवल हमारी ही नहीं पवित्र की भी मान-मर्यादा आप की एक बात पर ही निर्भर है। समाज की दृष्टि में वह घृणित हो सकता है—केवल आपकी एक बात से ही—कहिए-उत्तर दीजिए—'

जलधर बाबू थर २ कांप रहे थे। उनकी आंखों के सामने अन्धेरा छा गया था। भवशंकर बाबू की बात वे सुन तो अवश्य रहे थे परन्तु आंखें शून्य थीं।

उनकी मुखाकृति देख कर भवशंकर बाबू शंकित हो पूछने लगे 'बोलिए—बोलिए—जबाब दीजिए। आप की नातिन वास्तव में ही वेश्या के गर्भ से उत्पन्न हुई है? क्या कहते हैं आप—?' आंखें फाड़ २ कर जलधर महाशय भवशंकर बाबू की ओर केवल देखते ही रह गए।

अस्थिर हो भवशंकर बाबू ने जोर से उनका एक हाथ पकड़ कर कहा 'अब भी आप चुप क्यों हैं? जो सत्य है उसे स्पष्ट कह दीजिए। कहिए—वह आपकी लड़की की सन्तान, आपकी—'

'हां—वह पतिता के गर्भ से, मेरी लड़की—'

'हतभाग्य—नराधम!' यह कह भवशंकर बाबू ने इतनी

जोर से जलधर महाशय का हाथ झटका कि वृद्ध बेचारा लड़खड़ा कर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

फिर लोगों की ओर घूमकर भवशंकर बाबू ने कहा 'बात सत्य है। रामभय आज मेरा इतना सामान नष्ट हुआ इसकी भी मुझे परवाह नहीं। परन्तु आज तुमने मेरे परम बन्धु का कर्तव्य किया है। मेरी और इन लोगों की जाति की तुमने ही रक्षा की। भगवान समर्थ हैं इसी कारण रक्षा हो गई नहीं तो मैं आज समस्त समाज को पापी बना देता।' फिर एक बार जलधर की ओर तीव्र दृष्टि से देखकर शीघ्रता से भवशंकर बाबू अन्दर चले गए। जनता भी धीरे धीरे वहाँ से खिसकने लगी। भोजन न सही जाति तो बच गई। पेट की प्रबल क्षुधा का जाति के आगे कुछ भी महत्व नहीं यह बात सब को ही माननी पड़ी।

---

[५]

निर्जन गृह में पूर्वी आहत पक्षी की तरह पड़ी हुई थी और पास ही वृद्ध जलधर बैठे थे।

आज उनके मुख से सान्त्वना के ऐसे कोई शब्द नहीं निकल रहे थे जिस से कातर पूर्वी को सन्त्वना प्राप्त हो सके। वे उसके हृदय का दुख स्वयं अनुभव कर रहे थे। अपने हाथों से ही आज उन्होंने पूर्वी का सर्वनाश किया। उसे संसार में निराश्रय बना दिया। इस से अधिक दुख, इस से भयंकर

दुर्घटना और क्या हो सकती है ? संसार में एक पूर्वी के सिवाय उनका और है ही कौन ?

वे सत्य को छिपा सके। वे जानते थे कि एक दिन ऐसा आवेगा जब समस्त घटना उन्हें उद्‌घाटित करनी पड़ेगी। आज उनकी पूर्वी राजरानी, पथ की भिखारिन से भी अधम बन सकती है। जब पवित्र उन्हें बुलाने गया था तभी उस से दो चार प्रश्न पूछने के पश्चात् जलधर महाशय को यह ज्ञात हो चुका था कि वह दिन आ पहुँचा है। अब जो परिणाम आगे बढ़ने से हो सकता है वही पीछे हटने से भी होगा। जो सत्य अब तक राख से ढका हुआ था, उसे तनिक सा हिलाते ही यह अपने वास्तविक रूप में प्रकट हो गया। इस समय आस पास का समस्त वातावरण उसके प्रभाव से प्रभावित हो चुका है। मिथ्या सत्य के स्पर्श मात्र से सजीव सत्य प्रमाणित हो गया। अब इसे किसी तरह छिपाया नहीं जा सकता, अब तो लोहा भी इसकी उष्णता के आगे न ठहर सकेगा।

जलधर कुछ भी छिपा न सके। वास्तविक सत्य के सामने झूठ बोलना असम्भव था। इसी कारण तो उन्होंने स्वीकार कर लिया 'हां पूर्वी वैसी ही है जैसा कि आप लोग कह रहे हैं।'

पूर्वी के विषय में जो कुछ लोगों ने जाना है उसका इतना भयंकर परिणाम हो सकता है यह बात वृद्ध ने स्वप्न में भी नहीं सोची थी।

समस्त दिन पूर्वी ने जल स्पर्श भी नहीं किया था। उस समय भी उसके शरीर पर वधू वेश विद्यमान था। जिस

समय सारे घर में यह बात फैली उस समय उसके चारों ओर खड़ी हुई स्त्रियां घृणा से 'पतिता की कन्या' कह कर धिक्कारती हुई चली गईं। उसी क्षण वह वाताहत कदली के समान पृथ्वी पर गिर पड़ी। उसके नाना कब उसके पास आ बैठे, इसका भी उसे ज्ञान न था।

ऐसे विशाल भवन में जहां क्षण भर पूर्व कोलाहल का साम्राज्य था वहां बात की बात में अब भीषण निस्तब्धता का साम्राज्य हो गया। इस सन्नाटे को देख कर लोगों को गृह जनशून्य होने का भ्रम हो सकता था। ऐसा लगता था किसी जादूगर ने समस्त भवन अपने तनिक से दण्ड स्पर्श से योग निद्रा में सुला दिया हो।

नौकर चाकर भवन में इतने धीरे २ चल रहे थे, मानों वे डर रहे थे कि कहीं कोई सोता हुआ जग न जाय। भवशंकर बाबू ने दोपहर ही से अपने कमरे में जाकर दरवाजा बन्द कर लिया पवित्र कहां गायब हो गया यह कोई नहीं जानता। वह जानता था कि आज की इस घटना का वही कारण है। इधर उमा ठाकुर द्वारे में पड़ी हुई बार २ माथा रगड़ कर आर्तस्वर से पुकार रही थी 'भगवान ! यह किस पाप का परिणाम है।'

यह चाहे जिसके पाप का परिणाम हो। उमा तो बार २ यही सोच रही थी कि अच्छा ही हुआ कि पवित्र की माँ आज इस संसार में नहीं है। यदि वह होती तो जितना दुःख आज उसको हो रहा है उससे भी कहीं अधिक पवित्र की मां को इस घटना से होता। वैसे उमा को बहिन की मृत्यु का हार्दिक दुःख था, परन्तु आज वह प्राणपण से पुकार उठीं

'तुमने अच्छा ही किया भगवान्! जो दीदी को इस संसार से उठा लिया, किन्तु वैसी ही कृपा मुझ पर भी कर देते प्रभु! आज यदि मैं मर गई होती तो यह दारुण दुःख सहन न करना पड़ता।'

सबसे अधिक किसे आघात पहुँचा है? पूर्वी सोच रही थी 'मैं लुट गई! मेरे जीवन का अन्त हो चुका।' जो उसे प्राणों से भी अधिक प्यार करता है वह सोच रहा है "मैंने अपने हाथों ही अपना गला घोंट लिया। नारायण मेरे इस पाप का क्या प्रायश्चित्त है?"

सन्ध्या के अन्धकार का साम्राज्य पहले घर में ही प्रारम्भ हुआ और इसके पश्चात उसकी विजय ध्वजा धीरे २ खेतों और वृक्षों पर भी फहराने लगी।

'हाय मां—' एक दीर्घ निश्वास के साथ ये शब्द उच्चारण कर पूर्वी चौंक पड़ी। हे भगवान्! अब चुप रहना ही अच्छा है। मेरा मां कौन है? एक पतिता नारी जो अपनी देह विक्रय कर—'

'नारायण!' पूर्वी फूट २ रोने लगी 'पृथ्वी के श्रेष्ट धन से मुझे तुमने वंचित किया प्रभो! जिसे मैंने कभी नहीं देखा, जिसे मैं तुमसे अधिक पूज्य मानती आई, आज उसका कैसा नग्न चित्र तुमने मेरे सम्मुख प्रकट किया? किसी को 'मां' कहकर पुकारने का अधिकार भी तुमने मुझसे छीन लिया।' मछली जैसे पानी के बाहर निकलने पर तड़पती है उसी प्रकार मातृ-नाम-विच्युता पूर्वी भी छटपटा रही थी। काष्ठवत हो अश्रु हीन नेत्रों से उसके नाना यह सब देख रहे थे, परन्तु सान्त्वना

का एक शब्द भी उनके मुख से नहीं निकल रहा था।

क्षण भर छटपटा कर पूर्वी एक दम उठ बैठी। उसने वृद्ध का एक हाथ अपने हाथों से पकड़ कर कहा, "नाना--नाना-- सच कहो क्या मेरी माँ, तुम्हारी लड़की, वास्तव में एक कुलटा नारी थी? वही कुलटा--जिसे देखकर लोग घृणा से मुख फेर लेते हैं, जिसका इहलोक है परलोक नहीं, जो इस शरीर को केवल क्रय-विक्रय की ही वस्तु समझती है। नाना महाशय बोलो, मेरी मां जिसे मैंने कभी नहीं देखा, लक्ष्मी समझ कर जिसकी मैंने दुर्गा रूप में कल्पना की थी, क्या वही मेरी मां--वह मां नहीं, लड़की नहीं, बहन नहीं, वह-वह पतिता--वही घृणित पतिता नारी मात्र थी? नाना आज मुझे बहकाना मत। जिसका नग्न रूप संसार ने देख लिया है उसे मेरे सम्मुख छिपाने का प्रयत्न न करना। जो जगत की दृष्टि में पतित है उसे सती रूप में प्रकाशित करने का प्रयत्न न करना। नाना! सत्य कहो, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूं। सच बताओ, क्या वास्तव में वह--"

'यथार्थ ही वह वही थी बेटी। वह सती नहीं, नरक की प्रेतिनी, राक्षसी थी।'

हा-हाकार कर रोती हुई पूर्वी नाना की गोद में मुंह ढांपकर उच्छ्वसित कण्ठ से बोली 'तो फिर क्यों जान बूझकर तुमने पतिता की कन्या का विवाह किया नाना! यदि मेरा विवाह न करते तो मेरी मां का कलंक संसार तो न जान पाता, 'मां' कहकर पुकारते समय मुझे यह भयंकर यंत्रणा तो न सहन करनी पड़ती। मुझे घर लाकर इन लोगों को यों अपमानित तो न होना पड़ता। तुमने क्या किया नाना?

कुलटा की कन्या का विवाह कर आज चारों ओर अग्नि क्यों लगा दी ? अब उस अग्नि में मैं ही तो तड़प २ कर मरूंगी। तुम अपनी पूर्वी को बहुत प्यार करते थे, क्या इसीलिए उसे आज तुमने इस भीषण अग्नि में जान बूझकर ढकेल दिया ?'

'बेटी मेरा—' वृद्ध के अश्रु न रुके। 'समझ नहीं पा-रहा हूं। क्षण भर के लिए मैं आत्म-विस्मृत हो गया था। बहुत से तुमसे विवाह करने आए; उस समय मेरी विचार शक्ति जागृत थी इसी कारण तो मैंने उन सब को लौटा दिया था ; परन्तु पवित्र को मैं न लौटा सका। मैंने सोचा 'अब क्यों ?' तेरा जीवन सुखमय बनाने का लोभ संवरण न कर सका। तेरा विवाह कर दिया।'

नाना की गोदी में सिर रखकर पूर्वी फूट २ कर रोने लगी। अनेक क्षण रोने के पश्चात वह शान्त हो गई, फिर सिर उठा कर शांत भाव से बोली 'नाना एक बार वह कहानी कहो—मेरी अधम मां की। तुम सब जानते हो ?'

एक दीर्घ निश्वास लेकर जलधर महाशय ने कहा 'जानता हूं बेटी ! सोचा था कि एक दिन समस्त घटना तुम्हें सुनाऊंगा उसके पश्चात् तुम अपनी इच्छानुसार विवाह करती; परन्तु भगवान की यही इच्छा थी।'

'ओह ! नाना जी यदि यह बात मुझे पहिले ही ज्ञात हो जाती तो मैं कभी भी विवाह न करती। दोनों हाथों से वह सिर पकड़ कर बैठ गई। और उत्तेजना कम हो जाने पर उसने फिर कहा 'कहो नाना।'

उसका अश्रु सिक्त मुख हृदय से लगाकर अवरुद्ध कंठ

से नाना ने फिर कहना प्रारम्भ किया 'क्या इसी क्षण सुनोगी बेटी? हां इसी क्षण सुनो। इसी अपमानित अवस्था में सुनो 'विधवा पुत्री तारा को मैंने हृदय में छिपा रक्खा था जिस से कोई उसका पता न पा सके। किन्तु इस पर भी मैं उसे रोक कर न रख सका। एक दिन प्रातः काल मैंने जाग कर देखा वह नहीं थी।'

'वह कहां गई; बहुत खोजने पर भी उसका कुछ पता न चला। आखिरकार मैं उसकी आशा छोड़ बैठा। मैं समझ बैठा कि अब वह इस संसार में नहीं है। आठ नौ वर्ष पश्चात् मुझे उसका पता तब लगा जब कि वह अभागिनी रोग शय्या पर पड़ी थी और उसने मुझे अंतिम बार मिलने के लिए बुलाया था। उस समय उसके सुख के साथी उसे छोड़ चुके थे। उसे कोई एक घूंट जल देने वाला भी नहीं था।

"मैं किसी तरह न रुक सका। एक बार तो मैंने सोचा था कि कलंकिनी का मुख न देखूंगा, परन्तु यह धारणा अधिक देर न टिक सकी। स्नेह आगे देखता है पीछे नहीं जिस प्रकार नदी का स्रोत आगे की ओर ही जाता है पीछे नही लौटता उसी प्रकार स्नेह का भी है। यह भी लौटना नहीं जानता। इसी कारण विवश हो मैं भी निकल पड़ा।

"वहां जाकर देखा तो उस समय उसकी दुर्दशा चरम सीमा तक पहुँच चुकी थी वह एक घर के बरामदे में पृथ्वी पर पड़ी थी। मृत्यु की कालिमा उसके समस्त शरीर पर व्याप्त हो गई थी। वह निर्निमेष नेत्रों से मार्ग की ओर निहार रही थी। उसके सिरहाने दो वर्ष का एक शिशु मां! मां! कह कर रो रहा था।

उसकी यह हालत देखकर मेरी आंखों से आंसू बहने

लगे। सोचा था क्षमा न करूंगा किन्तु मैंने उसे क्षमा कर दिया। और मैं उसका सिर अपनी गोदी में लेकर रोने लगा।

"बालक की चिन्ता में उसके प्राण किसी तरह भी नहीं निकल रहे थे। यह कन्या रूपी पाप का चिन्ह कौन ग्रहण करेगा? उसे कोई भी रखना नहीं चाहता था। कोई वेश्या उसे ग्रहण करने को प्रस्तुत थी, परन्तु जिस मार्ग का कटु अनुभव उसकी नस नस में व्याप्त था, उसी मार्ग पर अपनी लड़की को वह नहीं ले जाना चाहती थी। अन्तिम समय तक उसका यही विचार दृढ़ था कि वह अपनी कन्या को इस मार्ग से दूरातिदूर रखे। वह जानती थी कि नर्क से भीषण यह जीवन है।

'मुझे लड़की सौंप कर उसने निश्चिंत ही आंखें मूंद ली। वह लड़की कौन है बेटी? क्या यह भी बताना होगा? वह तुम्हीं हो पूर्वी।'

आर्त स्वर से पूर्वी ने कहा 'नाना' दोनों के ही आंखों से अश्रु बह रहे थे।

बाहर खड़ाऊं का खट पट शब्द सुनाई दिया और दूसरे ही क्षण भवशंकर बाबू का स्वर सुन पड़ा 'पवित्र—'

परन्तु पवित्र का कहीं पता नहीं था।

'उमा—'

उमा उस समय ठाकुर द्वारे में थी वहीं से उसने भवशंकर बाबू की आवाज सुन ली थी।

'उमा! क्या वह वेश्या और उसका नाना अब भी इस

घर में है ? क्या मेरा पितृ गृह उनके स्पर्श से अब भी कलंकित हो रहा है ?'

शान्त स्वर से उमा ने उत्तर दिया मैंने देखा नहीं दादामणि ।'

भवशंकर बाबू ने गरज कर कहा 'यदि वे यहाँ हों तो अभी उन्हें यहां से निकल जाने को कहो । रात के नौ बजे एक गाड़ी कलकत्ते जाती है । दासी को दीवान जी के पास भेज कर एक पालकी की व्यवस्था करा दो । उन्हें अभी यहाँ से चला जाना चाहिए नहीं तो—'

'नाना—' पूर्वी उच्छ्वसित हो रो पड़ी 'वे लोग अब हमें एक क्षण भी यहां न ठहरने देंगे ।'

उस सूचीभेद्य अन्धकार में नाना ने पूर्वी के सिरपर हाथ फेरते हुए कहा 'हां, वे अब हमें क्यों रहने देंगे बेटी । अब तो उनका और हमारा समस्त सम्बन्ध टूट चुका है ।'

'सब खो गया नाना । सर्वनाश—'

पूर्वी रो रही थी परन्तु उसके समस्त आँसू सूख गये थे ।

बन्द दरवाजे के सुराख से हलका सा प्रकाश अन्दर प्रवेश करने लगा और धीरे २ द्वार खुल गया । हाथ में लालटेन लिए उमा सामने खड़ी थी ।

'बहू—'

क्षण भर में ही पूर्वी ने अपने को संभाला 'नहीं, इन लोगों के सम्मुख दुर्बलता प्रकट करना उचित नहीं । इस समय कठोर बनना ही पड़ेगा । अब पाषाण की तरह हृदय

दृढ़ करने की आवश्यकता है।'

उसने उत्तर नहीं दिया। बहू कह कर अब उसे पुकारना उसका अपमान करना है। यह केवल उपहास मात्र है वह अब बहू नहीं है। इस गृह से उसका क्या सम्बन्ध ?

उमा ने पुकारा 'पूर्वी—'

कहीं से अत्यन्त क्षीण स्वर से पूर्वी ने उत्तर दिया।

'इधर आओ पूर्वी बात सुनो।'

रुद्ध कंठ से पूर्वी ने कहा 'मां मैंने सब सुन लिया है। आप पालकी मंगाइये हम जा रहे हैं। और लो यह आपके गहने हैं।'

उसने आभूषण पहले ही उतार कर उमा को देने के लिए पास रख लि॰ थे। अब वहां के कपड़े भी उतार कर उन पर आभूषणों को रख पूर्वी ने वह सब उमा के चरणों के पास रख दिया।

इस दृश्य को देख कर उमा की आंखें डब डबा आई। क्षण भर वह कुछ न बोल सकीं, फिर मुंह घुमाकर आंसू पोंछते हुए उन्होंने कहा 'क्यों बेटी! उन्हें उतार क्यों दिया?'

स्थिर कण्ठ से पूर्वी ने उत्तर दिया 'मां! इन सब पर मेरा अब क्या अधिकार है? मेरा जब समस्त सम्बन्ध ही टूट गया, जब मैं क्षण भर में ही सब कुछ खो बैठी तो फिर यह मिथ्या भार वहन करने की क्या आवश्यकता है। मैं तो अब आप की कोई नहीं हूं। इस घर में दासी का जो अधिकार है मेरा—' कहते २ पूर्वी रो पड़ी। उमा के नेत्रों में जल भर आया उसे छिपाने के विचार से उमा भी लालटेन वहीं छोड़

कर जल्दी से अन्दर चली गई।

खिड़की के पास पालकी आई। भवशंकर बाबू ने ऊपर के बरामदे से ही गम्भीर स्वर से पुकार कर आदेश दिया 'उमा! उन का जो कुछ सामान हो उन्हें देकर बिदा करो, पालकी आ गई है।'

नौकर ने टीन का बक्स बाहर निकाल दिया और जलधर महाशय का कांपता हुआ हाथ दृढ़ता पूर्वक पकड़ कर पूर्वी आगे २ चल दी जाते समय उसकी इच्छा थी कि उमा से मिल ले और पवित्र के चरणों की धूलि मस्तक से लगा ले; किंतु वह कुछ भी न हो सका।

दोनों नीरव प्राणियों सहित अन्धकार बेंधती हुई पालकी स्टेशन की ओर चल दी।

---

[६]

इसके पश्चात् दो दिन और व्यतीत हो गए, परन्तु पवित्र का कहीं पता न चला। उमा ठाकुर द्वारे में असहाय पड़ी २ रो रही थी। भवशंकर बाबू का मुख अन्धकारमय हो गया था। पवित्र के अचानक कहीं चले जाने से उन्हें बहुत दुःख हुआ। विषाद की धूमिल छाया उनके शुभ्र मुख-मंडल को घेरे हुए थी। इसी कारण वे कहीं बाहर भी न जाते थे।

दो दिन पश्चात् वे बाहर निकले तो दीवान वनमाली-राय से साक्षात हुआ। भवशंकर बाबू को चिन्तित देख कर राय महाशय वहां से खिसकने लगे; किन्तु भवशंकर बाबू ने उन्हें रोक कर पूछा 'दीवान जी पवित्र की भी कुछ खबर है?'

एक दीर्घ निश्वास छोड़ कर वनमाली बाबू ने उत्तर दिया 'नहीं।'

'नहीं?'

भवशंकर बाबू एक दम स्तब्ध हो गए। फिर क्षण भर बाद बोले 'उसके विषय में कोई भी नहीं बताता? क्या किसी ने भी उसे नहीं देखा?"

उनके अंतर की आकुलता को दीवान जी खूब अच्छी तरह समझ रहे थे। पितृ-स्नेह पर कितना भी कठोर आवरण क्यों न डाला जाए, फिर भी उसे छिपाना असम्भव है। तनिक सा आघात भी उसे स्पष्ट कर देता है।

सिर हिला कर वनमाली राय ने उत्तर दिया 'कोई नहीं बाबू! उस के विषय में कोई नहीं बता रहा है। और किसी ने उसे देखा भी तो नहीं।'

'तो फिर वह कहां गया?' करुण स्वर से भवशंकर बाबू ने पूछा और फिर दीवान जी के दोनों हाथ पकड़ कर दीन हो भवशंकर बाबू ने कहा 'वनमाली! पवित्र केवल मेरा ही नहीं तुम्हारा भी लड़का है। बल्कि मुझ से वह तुम्हें अधिक पहिचानता है, अधिक स्नेह करता है। दीवान जी! इस संसार में पवित्र के सिवाय मेरा और कोई सहारा नहीं है। मेरा जीवन सर्वस्व वही एक पुत्र है। पवित्र को छोड़ कर मेरा अब

है ही कौन ? तुम किस काम के लिए जा रहे थे ? जमींदारी के ? कागज पत्र सब फेंक दो। ओह ! समस्त वस्तुओं में आग लगा दो। कैसे भी हो पवित्र को ले आओ। मेरा घर एक दम सूना हो गया है, मेरे हृदय में केवल अन्धकार है। मेरा सर्वस्व नष्ट हो जाए बनमाली पर मेरे पवित्र को ले आओ। एक बार उसका मुख मुझे दिखाओ।' यह कहते २ उनका कण्ठ अवरुद्ध हो उठा। दीवान जी के हाथ छोड़ कर वे शीघ्रता से सामने वाले कमरे में चले गए।

वनमाली बाबू को इसके पूर्व ही पवित्र का पता चल गया था। वह पास के एक गांव में अपने एक मित्र के पास ठहरा हुआ था। पितृ-स्नेह रूपी अगाध समुद्र की आज वनमाली-बाबू थाह ले रहे थे। अब वे निश्चिन्त हो पवित्र को लौटाने के लिए चल दिए। वे पवित्र को इसी क्षण ले आना चाहते थे जिस से फिर उसे पिता के क्रोध का शिकार न बनना पड़े।

भवशंकर बाबू मर्मवेदना से छटपटाते हुए इधर उधर टहल रहे थे। इस समय उनके समस्त क्रोध का लक्ष्य पूर्वी बनी हुई थी। भगवान न करे पवित्र का कुछ अनिष्ट हो जाय नहीं तो वे पूर्वी की हत्या करने से भी नहीं चूकेंगे। चाहे नारी हत्या ही क्यों न हो। उस स्त्री की हत्या करने में कुछ दोष नहीं, जो पुत्र को स्नेहमय पिता के वक्ष से छीन कर दूर कर देती है। ऐसी राक्षसी को मारने में पाप छू तक नहीं जाता है।

दोपहर को वनमाली लौट आए और आकर भवशंकर बाबू से बोले 'पवित्र लौट आया है। और बाहर खड़ा है। परन्तु आपके सम्मुख उसे आने का साहस नहीं हो रहा है।'

भवशंकर बाबू ने निवृत्ति की सांस ली। पल भर में ही

उनकी समस्त विषण्णता दूर हो गई।

चोर की तरह पवित्र दरवाजे के अन्दर आ खड़ा हुआ।

भवशंकर बाबू अतृप्त नयनों से पुत्र के मुख की ओर देखते रहे। फिर उन्होंने शान्त स्वर से पूछा 'तुम कहां चले गए थे पवित्र ?'

पवित्र के मुख से एक बात भी नहीं निकल रही थी। वह लज्जा और घृणा के कारण पिता की ओर आंख उठा कर भी नहीं देख पा रहा था।

उसे सम्मुख बैठने का आदेश देकर स्नेह पूर्ण कण्ठ से पिता ने कहा 'तुम इतने कुण्ठित क्यों होते हो पवित्र ! मुझे बिना सूचना दिए तुमने बाल-बुद्धि के कारण एक कार्य कर डाला था, तब भी मैंने जिस प्रकार तुम्हें क्षमा किया था उसी प्रकार अब भी क्षमा करता हूं। समाज के सम्मुख मेरा सिर नीचा हो गया है; परन्तु एक बार प्रायश्चित करने पर सब ठीक हो जाएगा। समाज पर फिर मेरा प्रभुत्व स्थापित हो जाएगा। मैं समाज का कर्ता हूं मुझे समाजच्युत करने की किस माई के लाल में शक्ति है। उस दिन जिसके कारण इतना अपमानित होना पड़ा, उसे तो मैंने उसी दिन यहां से निकाल बाहर किया। भावुकतावश तुम एक भूल कर बैठे थे, उस के लिए अब मैं तुम्हें कठोर दण्ड न दूंगा।'

पवित्र सिर नीचा किये निश्चल बैठा रहा।

भवशंकर बाबू ने तीव्र कण्ठ से कहा 'किन्तु बड़ी हिम्मत की उस पतिता कन्या और उस के नाना ने—जान बूझ कर किसी गृहस्थ की इज्जत बिगाड़ना—क्या इतना साहस और कोई कर सकता है। तुम्हें नासमझ समझ कर उन्होंने तुम्हारी

आँखों में धूल झोंक दी! यदि समाज न जानता और दामोदर ने रक्षा न की होती तो वे मेरे लिए भी कुछ उठा न रखते। वह मेरी पुत्र वधू थी। एक न एक दिन दामोदर की पूजा सामग्री भी उसे जुटानी पड़ती। किसी न किसी दिन भोग लगाने की नौबत भी आ ही जाती। उस समय क्या होता—भगवान् !'

भय से वे सिहर उठे। दोनों हाथों से नमस्कार करते हुए उन्होंने कहा, 'उन्होंने ही भेद खोल दिया मंगलमय। सदा भक्तों का मंगल ही करते हैं। हमारे दामोदर जागृत हैं। वे तो सो नहीं रहे हैं। पाप तो वे तनिक भी सहन नहीं कर सकते। मनुष्य को छलना सम्भव है—यदि देवता के साथ भी कपट चल सकता तो—तो फिर पाप पुण्य में कुछ भी भेद न रहता।'

वनमाली राय सिर नीचा किए हुए चुप चाप मालिक का विस्तृत व्याख्यान सुन रहे थे। हतभागिनी पूर्वी को उन्होंने ही टिकट खरीद कर रेल पर चढ़ा दिया था। पूर्वी के मुख से निकले हुए शोक पूर्ण शब्द अब भी उनके कान में गूंज रहे थे। सर्वस्व दान कर शान्ति पूर्वक दृढ़ता से केवल नारी ही चली जा सकती है पुरुष नहीं। उस समय उसकी आंखों में आंसुओं का लेश भी नहीं था। मुख पर गम्भीरता स्पष्ट झलक रही थी।

उसे रेल में बैठाते हुए वृद्ध वनमाली की आंखों में आंसू छलछला आए। हाय हतभागिनी! कुछ दिन पूर्व ही तो आनन्द पूर्वक उज्ज्वल हृदय से तू ने इस ग्राम की भूमि पर पदार्पण किया था। उस समय तेरे हृदय में न जाने कैसी र

आशाएं थी, भविष्य के कैसे-कैसे सुन्दर चित्र तू ने अंकित किए होंगे। आज समस्त आशाओं को चुप चाप विसर्जित कर, हृदय में अन्धकार का साम्राज्य बसाक र तू चली गई।

वे उद्वेग व्याकुल नेत्रों से ग्राम की ओर देख रहे थे; किन्तु मध्य में सूचिभेद्य विराट विपुल अन्धकार राशि मुंह बाए खड़ी थी। उनकी दृष्टि क्या इस अन्धकार को भेद सकती थी।

गाड़ी चली गई। उस रात्रि को वनमाली सो न सके। बार बार उनके सम्मुख श्वशुर-गृह से चिरनिर्वासिता अभागिनी पूर्वा का विषण्ण मुख-मंडल नाच उठता था। उसकी व्यथा का अनुभव कर उन्होंने बार २ भगवान को पुकारा था।

आज भवशंकर बाबू का दीर्घ व्याख्यान सुनकर उन्होंने आह भरते हुए धार कण्ठ से कहा 'आप मेरा अपराध क्षमा करें। एक बात कहने की आज्ञा चाहता हूं। भगवान जागृत हैं, उन्होंने एक का मंगल कर दूसरे का अमंगल किया है। क्या इसीलिए उन्हें दयामय कहा जाए? कदापि नहीं।'

भवशंकर बाबू ने पूंछा 'किसका अमंगल?'

वनमाली बाबू ने उत्तर दिया 'जो लड़की आई थी।'

भ्रू कुंचित कर भवशंकर बाबू ने मुंह दूसरी ओर कर लिया।

साहस कर वनमाली ने कहा, 'क्रोध न कीजिए बाबू! मैं जो कुछ कह रहा हूं यह क्रोध करने योग्य नहीं। ऐसा करने से आपका मंगल हुआ। आपके देवता उस के

स्पर्श से निष्कृति पा गए, किन्तु एक सत्य बात कहता हूं। क्या देवता एक इसी आधार को लेकर सजीव हैं या समस्त जीवों में उनका निरन्तर वास है? वह वेश्या कन्या है केवल यही उसका अपराध है। किन्तु सच कहिए क्या उस में नारायण का वास नहीं था? नारायण चैतन्य हैं यह बात बिल्कुल सत्य है कारण जब समस्त जीव जगत विद्यमान है तो उन में नारायण का भी अस्तित्व होना सत्य है। यदि जीव जगत का अस्तित्व अस्वीकार किया जा सके तो उनमें भगवान का न होना कौन स्वीकार कर सकता है? आप ज्ञानी हैं, सब समझ बूझकर भी आपने इतनी बड़ी भूल कर डाली बाबू। एक पाषाण में आपने देवता का वास मान लिया; परन्तु 'ब्रह्म मय विश्व' का सिद्धान्त आप न समझ सके। और वह अभागिनी मान लिया कि वह वेश्या कन्या है; परन्तु वह क्यों पतिता कहलाएगी? वह स्वयं पवित्र निष्ठाचारिणी है। क्या उसकी पवित्रता उस को माता के पाप से ऊपर न उठा देगी? क्या पतिता माता के पाप का प्रायश्चित्त उसे ही करना चाहिए? यह कहाँ लिखा है?'

गंभीरता से भवशंकर बाबू ने कहा 'यदि ऐसी ही बातें करते रहोगे वनमाली तो उनका अन्त मुझे यहीं करने दो। धर्म के हेतु समाज का निर्माण हुआ। समाज की अवहेलना कर हम जीवन यापन नहीं कर सकते। समाज का अनुगामी बन कर समाज शृङ्खला में बद्ध होकर ही हमें चलना होगा? यही हैं समाज का उद्देश। सत्य, पहचान लिया है केवल इसी कारण ही समाज के विरुद्ध कोई बात नहीं की जा सकती। संसार में ऐसे बहुत से लोग है जो विश्वास करते और कहते भी है कि 'ब्रह्ममय सृष्टि है,' परन्तु उनके आचरण कुछ

और ही होते हैं। वे पवित्रता को इतना बचाकर क्यों चलते हैं? मैं केवल स्त्रियों की ही बात नहीं कह रहा हूं, कारण ऐसे बहुत से संस्कार बचपन ही से उनके स्वभाव में शामिल हो हो जाते हैं—मैं पुरुषों की बात कर रहा हूं। जो महामहोपाध्याय और पण्डित हैं, ज्ञान दीप्ति से जिनके हृदय उज्ज्वल हैं फिर वे ही क्यों इतना स्पृश्यास्पृश्य का विचार कर चलते हैं। अनेक हिन्दुओं के रसोई घर में मुर्गी चले जाने पर वे क्यों भोजन की समस्त सामग्री फेंक देते हैं? कुएं, बावड़ियों पर अस्पृश्यों को क्यों नहीं जाने देते? इसी छुआ छूत के विचार को उन्होंने समाज में सर्व श्रेष्ठ स्थान क्यों दिया है? इन्हीं सब आचार विचारों के कारण तो वेश्या कन्या समाज में स्थान नहीं पा सकती। समाज का द्वार उसके लिए सदा ही बन्द है। पतितों की संतानों को शुद्धाचरण होने पर भी, समाज नहीं ग्रहण कर सकता। उन्हें अपने पूर्वजों द्वारा किया गया पाप भोगना ही पड़ेगा। मैं यह बात अस्वीकार नहीं करता कि ज्ञानी के हृदय में जिस भगवान का वास है, वही अज्ञानी के हृदय में भी विद्यामान है। पुण्यात्मा में भी वही है और पापात्मा भी उस से वंचित नहीं। यदि समस्त संसार पापियों को क्षमा कर सकता, विधर्मियों को समान अधिकार दे सकता, तो मैं ऐसा कर सकता था। समाज में रह कर हमें समाज का अनुशासन मानना ही पड़ेगा। ऐसे समय सत्य को भी तिलांजलि देनी होगी।' एक लम्बा व्याख्यान देकर वनमाली बाबू धीरे २ वहां से चले गए। पवित्र भी चुपचाप बाहर निकल गया।

उमा से मार्ग में पवित्र की भेंट हुई। वे उसे हृदय से लगाकर रोने लगीं। दोनों ही चुप थे। अभागिनी पूर्वी के मर्म-भेदी और उच्छ्वास पूर्ण शब्द अब भी उन्हें स्मरण हो रहे

थे। पूर्वी का सर्वनाश पवित्र ने ही किया इसी कारण वे चुप थीं। यदि आज पवित्र की जगह और कोई होता तो वे अवश्य उस पर क्रोध करतीं।

पवित्र के अस्त व्यस्त केशों को एक ओर करते हुए गद्‌गद् कण्ठ से उन्होंने कहा 'पवित्र बात अच्छी नहीं हुई। आहा! वह सरल बालिका कुछ भी नहीं जानती उसे इतना कठोर दण्ड देना अन्याय है। अच्छा पवित्र, एक बात पूछती हूं, विवाह करने के लिए कौन अधिक उत्सुक था तुम या वे लोग ?'.

'मैं मौसी—' पवित्र ने मौसी की गोद में मुंह छिपा लिया। इस समय मुंह दिखाने में उसे लज्जा प्रतीत होती थी।

'तुमने ? तुमने जब यह प्रस्ताव किया तो क्या उन्होंने तुरन्त सम्मति दे दी थी ?'

पवित्र ने मुख उठाकर कहा 'नहीं मौसी वे पहले किसी तरह भी सम्मत नहीं हो रहे थे; परन्तु अन्त में मेरे हठ के कारण जलधर बाबू विवाह कर देने के हेतु प्रस्तुत हो गये।'

कुछ देर चुप रह कर उमा ने कहा 'अच्छा इस समय जाओ।'

नीरव शयन गृह में पवित्र अकेला ही था। वह सोच रहा था कि उस दिन दो पहर को भागने के पूर्व वह चोर की तरह इस द्वार तक आया था। उस समय पूर्वी मूर्छित हो यहीं पृथ्वी पर पड़ी हुई थी। उसी स्थान पर उसके आंसुओं की धारा अविरल वेग से बह रही थी। अब भी मानों उन अश्रुओं के दाग सजीव थे।

ओह ! कितनी असह्य मर्म वेदना से वह रो रही थी। उसका अभीप्सित वरदान उसे प्राप्त हो गया था किन्तु भगवान की वक्र दृष्टि होते ही वह क्षण भर में ही सब कुछ खो बैठी। आखिर एक भिखारिन से भी अधम होकर उसने यह ग्राम त्याग दिया।

पवित्र दोनों हाथों से मुंह ढांप कर पड़ रहा।

---

(७)

'पूर्वी लौट आई है।'

पूर्वी लौट आई है, किन्तु जो पूर्वी गई थी यह तो वह पूर्वी नहीं है। वह तो हंसती हुई आशा के सुखमय आलोक में आनन्द पूर्वक गई थी। यह पूर्वी हृदय में दारुण दुख लेकर भविष्य अन्धकारमय बनाकर रोती लौटी है। इसी कारण तो यह वह पूर्वी नहीं है, यह तो उसकी छाया मात्र है।

अब बातें करते समय वह खुल कर नहीं हंसती। नाना के साथ भी उसका पहलेसा हास परिहास नहीं होता। जबरदस्ती हंसने का प्रयत्न करने पर भी उसे हंसी नहीं आती बल्कि उसकी जगह आँसू आ जाते हैं। वह जल्दी से मुंह छुपा कर चली जाती है। घर का काम काज किए बिना काम नहीं चलता, वह भी यदि अपने लिए ही करना होता तो कदाचित् वह कुछ भी न करती, किन्तु नाना जो हैं। उन्हें खिलाना पिलाना पड़ेगा ही, इसी कारण तो फिर वह उसी

प्रकार पहिले की तरह प्रातःकाल उठ कर काम में लग जाती है, परन्तु वह भी कितनी देर सामान्य भोजन बनाकर परोसना बर्तन मलना पानी भरना केवल यही तो, फिर भी दिन शेष बच जाता है। यदि दिन भर भी किसी तरह सोचने का समय न मिलता तो फिर भी रात तो सूनी थी।

आनन्दपूर्ण गृह एकदम निरानन्द हो उठा। वीणा बजते २ रुक गई। उसके समस्त तार अस्त व्यस्त हो बिखर गए। इसी कारण वह अब नीरव थी। दादा महाशय शून्य मस्तक पर हाथ फेरते हुए सोचते 'यह क्या हुआ? अब किस प्रकार वे आनन्द के दिन लौट सकते हैं?'

नातिन के विषादपूर्ण मुख की ओर देख कर उनका हृदय हा हा कार कर उठता। किसी दिन वे उसे जबरदस्ती पढ़ने बैठाते और स्वयं स्तब्ध हो सुना करते। सुनते सुनते ध्यान न जाने किधर बट जाता पुस्तक की ओर उनका तनिक भी ध्यान न रहता। इस के पश्चात पूर्वी पढ़ते पढ़ते रुक जाती और नाना को गम्भीर चिन्ता में विभोर देख कर वह कहती 'सुनते हो नानाजी?'

नाना एक दम चौंक पड़ते। वह स्वयं अपनी इस अस्वस्थता का अनुभव कर रहे थे। पूर्वी का प्रश्न सुन वे तनिक लज्जित हो उत्तर देते 'सुन तो रहा हूं। हां फिर एक बार उस जगह तो पढ़ो, तुमने क्या पढ़ा स्मरण नहीं।'

नाना की अवस्था पर विचार कर पूर्वी का हृदय गम्भीर वेदना से परिपूर्ण हो जाता। वह पुस्तक बन्द कर कहती 'आज रहने दो नाना कल फिर सुनाऊंगी।'

किन्तु इस प्रकार तो दिन नहीं कट सकते। यह कैसी भीषण गोपन व्यथा दोनों के हृदय में जाग उठी है ? हंसने का प्रयत्न करने पर हृदय के घावों पर क्यों आघात होता है। और उन में टीस क्यों होने लगती है। इन घावों को सुखाना होगा। इनका उपचार करना होगा, इन्हें दिन दिन बढ़ने देने से तो काम नहीं चलेगा।

उस दिन पूर्वी दोपहर को भोजन के पश्चात छत पर सूखे कपड़े समेटने गई थी। उसने नीचे से नाना का व्यग्र आह्वान सुना 'पूर्वी—जल्दी आओ बेटी एक तमाशा तो देख जाओ।'

यह सुन पहिले की एक ऐसी ही घटना पूर्वी के मस्तिष्क में सजीव हो उठी। उस दिन भी नाना ने इसी प्रकार व्यग्रता से उसे बुलाया था और जल्दी २ नीचे जाने पर उसने प्रवित्र को पाया था।

कपड़े समेटना छोड़कर पूर्वी शीघ्रता से नीचे उतर गई।

'यह देख बेटी तेरे लिए क्या लाया हूं।'

वह एक सफेद लम्बे बालों वाला काबुली बिल्ली का बच्चा था। उसकी लाला दोनों आखें, घने और लम्बे बाल, गले में रेशमी फीते से बंधे दो चार घुंघरू अत्यन्त शोभा दे रहे थे।

शुष्क मुख से एक बार उसकी ओर देख कर पूर्वी ने वहां से जाने का प्रयत्न किया। यह देख व्यस्त हो नाना ने कहा 'जाती हो क्या ?'

पूर्वी ने उत्तर दिया 'और क्या करूं नाना। छत पर

सब कपड़े पड़े हुए हैं; उन्हें उतार लाऊं, नहीं तो हवा से कहीं वे सड़क पर जा गिरें।'

जलधर बाबू ने कहा 'एकाध क्षण में वे कहीं भागे नहीं जाते। बिल्ली का बच्चा कैसा है कहो तो ?'

पूर्वा ने संक्षेप में उत्तर दिया 'बहुत अच्छा है।'

उत्साहित हो वृद्ध ने कहा 'एक बार पूछो तो मैं इसे कहां से लाया ? जानती हो नरेन्द्र बाबू की बिल्ली का यह एक ही बच्चा है। वे किसी तरह भी इसे देना नहीं चाहते थे ? किन्तु मैं कब मानने वाला था। आखिर ले ही आया। वे लोग कहते हैं 'तीन दिन पश्चात बच्चे को दिखाने ले आना और इसे खूब दूध मछली खिलाना। इसी कारण बेटी दूध और मछली तनिक अधिक खरीदनी पड़ेगी, नहीं तो काम कैसे चलेगा ?'

'अच्छा देखा जाएगा।' यह कह कर फिर पूर्वा जाने को प्रस्तुत हुई। बिल्ली के बच्चे के प्रति उसकी इस उदासीनता को देख कर वृद्ध जलधर निराश हो बोले 'फिर चली जा रही हो ?'

'छत पर कपड़े जो—'

तनिक क्रोधित हो जलधर बाबू ने कहा 'चूल्हे में जाएं तुम्हारे कपड़े। इसे तू लेगी या गोद में ही लिए बैठा रहूं ?'

बिल्ली का बच्चा लाने में नाना का क्या हेतु है, इसे अब पूर्वा अच्छी तरह जान गई। नाना उसे किसी बात से भी प्रसन्न नहीं कर पा रहे थे। इसी कारण तो नरेन्द्र बाबू के घर केवल पूर्वा के हेतु इतना अपमान सह कर वे बिल्ली का बच्चा ले आए थे। इस ममता के विषय में विचार कर पूर्वा की आंखों में आंसू भर आये। किसी तरह आंसू

पोंछ कर गद् गद् कण्ठ से उसने कहा 'बिल्ली का बच्चा मेरा क्या करेगा और मैं इसे लेकर क्या करूंगी । नहीं; यदि केवल मेरे ही कारण तुम इसे ले आए हो तो लौटा दो । अब मैं नन्ही बालिका तो नहीं हूं जो बिल्ली के बच्चे के साथ खेलूं ।'

'तू बालिका नहीं है ? केवल पन्द्रह वर्ष की अवस्था ही में तूने यह सब कहां सीख लिया बेटी --?'

वृद्ध ने उसे खींच कर अपनी गोद में बैठा लिया और हा-हा-कार कर रोने लगे। 'इस अवस्था में ही तुझे इतना विचारशील किस ने बना दिया पूर्वी ? इस से पूर्व मैंने तुझे तो एक दिन भी गम्भीर हो सोचते नहीं देखा । किसी क्षण तेरी आंखों में आंसू नहीं देखे। मेरे साथ हंस खेल कर ही तो तू ने दिन बिताए हैं। एक दिन तू यही बिल्ली का बच्चा चाहती थी। तू कहा करती थी कि यदि मुझे काबुली बिल्ली का बच्चा मिल जाए तो फिर और कुछ नहीं चाहिए । आज तुझे वह बात किसने भुलवा दी बेटी। केवल पन्द्रह वर्ष की अवस्था में ही तू ने समस्त सुख किस के हेतु विसर्जन कर दिया।'

'यह क्या करते हो नाना—यह क्या, तुम रोते क्यों हो ?'

पूर्वी ने शीघ्र अपने अंचल से नानाजी का मुख पोंछकर कहा 'पागल हुए हो क्या ? बात कुछ भी नहीं और रो रो कर आफत किए डाल रहे हो। इस तरह क्या रोना चाहिए ? दिन पर दिन तुम बच्चों से भी अधिक नासमझ हुए जारहे हो नाना! चुप रहो कहती हूं—चुप न रहोगे तो मैं तुमसे इतनी गुस्सा हो जाऊंगी कि कुछ भी नही खाऊंगी।'

नाना चुप हो गए। कुछ क्षण तो उनके मुख से एक भी शब्द न निकला। पूर्वी भी उनके सिर पर हाथ फेरती हुई चुपचाप बैठी रही।

एक दीर्घ निश्वास छोड़कर जलधर बाबू ने कहा 'तो फिर बिल्ली का बच्चा लौटादूं ?'

शान्त स्वर से पूर्वी ने उत्तर दिया 'क्यों, क्यों ! जब ले ही आए हो तो रहने दो उसके लिए दूध मछली की व्यवस्था हो जाएगी। वह खूब खेल रहा है, खेलने दो। तुम तनिक ठीक तरह बैठ जाओ नाना, जिससे मैं अच्छी तरह तुम्हारा सिर मल सकूं। इसके पश्चात् ऊपर से कपड़े उतार लाऊंगी। देखो तो तुम्हारे सिर के सारे ही बाल सफेद हो गए हैं और चेहरा भी बहुत खराब हो गया है नाना।'

जलधर बाबू ने हंसने की विफल चेष्टा करते हुए कहा 'आज ही तू ने देखा है पूर्वी ? अरे बाल तो उसी दिन पकने प्रारम्भ होगए थे जिस दिन वे लोग मुझे अकेला छोड़ गए। उसके पश्चात् मैंने तुझे पाया, सफेद बाल फिर काले होने लगे। मेरा यौवन फिर लौट आया। हठात् उस दिन स्वप्न टूट गया। मुझे तब ज्ञात हुआ कि मैं मिथ्या स्वप्न देख रहा था। मेरे अलक्षित तीस वर्ष निकल गए। उस दिन मैं दृढ़ हो समाज के सम्मुख खड़ा होने गया था, परन्तु साठ वर्ष के इस बुढ़ापे ने पैर हिला दिए, सिर थर थर कांपने लगा, उसे फिर मैं ऊंचा न उठा सका, दृष्टि रहते हुए मैं दृष्टि हीन हो गया। ओह ! बेटी मैंने बहुत आघात सहे हैं। परन्तु यह अन्तिम आघात मैं किसी तरह न सह सका। अरे रे ! पूर्वी जरा छाती पर तो हाथ फेर दे देख तो मेरे हृदय में कैसी यंत्रणा हो रही है।'

जल्दी से पूर्वी नानाजी के हृदय पर हाथ फेरने लगी। पीले पड़े हुए चेहरे से उन्होंने कहना प्रारम्भ किया 'न जाने क्यों हृदय में भीषण यन्त्रणा होने लगती है, सिर घूमने लगता है, आँखों के सम्मुख अन्धेरा छा जाता है। उस समय ऐसा ज्ञात होता है मानों अभी प्राण निकल जायेंगे।

उद्विग्न हो पूर्वी ने कहा 'किसी डाक्टर को बुलाऊं दादा ? ऐसी बीमारियों को छिपा रखना—'

तनिक टालने के स्वर में जलधर बाबू ने कहा 'दूर पागल ! वह सब बिल्कुल ठीक हो गया। उसके लिये सोचने की क्या आवश्यकता है। भय का कोई कारण नहीं। मैं अभी मरता नहीं, यदि मैं मर जाऊं तो तुम कहां रहोगी ? तुम्हारी देख भाल कौन करेगा ? तुम किसके सहारे खड़ी रहोगी ? अभी भगवान मुझे किसी तरह भी ग्रहण नहीं करेंगे। जाओ जाकर कपड़े उतार लाओ तब तक तनिक मैं सो लूं।'

केवल इस बात से ही हृदय की समस्त व्यथा शान्त हो गई; किन्तु पूर्वी निश्चिन्त न हो सकी। उसने उसी प्रकार व्यग्र हो कहा 'उन्हें तो फिर भी लाया जा सकता है नाना। जब तक मैं तुम्हारे हृदय पर हाथ फेरती हूं तब तक तुम आँख बन्द कर सो जाओ। दोपहर की गर्मी के कारण तुम्हें ऐसा लग रहा है।'

छोटे बालक के समान जलधर बाबू को सुलाकर पूर्वी उनके हृदय और पीठ पर हाथ फेरने लगी।

[८]

एम० ए० का परीक्षा फल निकल चुका। पवित्र सम्मान सहित पास हो गया।

घर में आनन्द का अपार सागर प्रवाहित होने लगा भवशंकर बाबू ने गांव की चण्डी देवी की षोडशोपचार पूजा की। गृह देवता दामोदर की षोडशोपचार पूजा की। सोने के सिंहासन पर बैठाकर देवता पर मोतियों का झालरदार पंखा झला गया। अनेक दरिद्रियों को अन्न और वस्त्र दान किए गए। इसी उपलक्ष में गांव के सब लोग जमींदार बाबू के यहां भोजन कर गए। केवल राममय बाबू ही न आए और वे आते ही कब थे? बहू-भात के दिन भी वे केवल भवशंकर बाबू को अपमानित करने आए थे। आज उनके न आने पर कुछ हानि नहीं हुई और किसी ने भी इस ओर अधिक ध्यान नहीं दिया।

किन्तु यह आनन्द केवल तीन आदमियों को स्पर्श न कर सका। प्रथम वनमाली बाबू को। आज भी उनके सम्मुख पूर्वा से विदा होते समय का दृश्य स्पष्ट नाच रहा था। उनके उस शोकाकुल मन को यह सब आनन्द अच्छा नहीं लग रहा था, परन्तु इससे दूर भी नहीं रहा जा सकता, कारण वे पराधीन हैं। यदि आज वे वेतन भोगी भृत्य न होते तो वे कभी इस आनन्द में भाग न लेते।

आज का समारोह पवित्र को और भी दुखी कर रहा था। उसका मुख मलिन था। कभी कभी केवल लोगों को दिखाने के लिए वह बाहरी हंसी हंस देता, फिर भी वह केवल जबरदस्ती

की ही हंसी होती। उसमें मधुरता होकर विभत्सता अधिक होती।

हाय! यदि आज वह होती—तभी तो उसे यथार्थ आनन्द होता? जिसके हृदय में प्रचण्ड अग्नि भड़क रही हो उसे केवल जल से स्नान करने से क्या शान्ति प्राप्त हो सकती है?

इस परीक्षा की सफलता पर वह तनिक भी प्रसन्न नहीं था। वह सोच रहा था कि जो मनुष्य मृत्यु शय्या पर पड़ा जीवन के अन्तिम क्षण गिन रहा हो उसका शृङ्गार करने से क्या लाभ? स्मशान में सुहागरात का शृङ्गार किस लिए? जिस हृदय की शान्ति, आनन्द, समस्त नष्ट हो चुका है उसे प्रसन्न करने का यह मिथ्या प्रयास क्यों?

पवित्र की यह दशा एक बार कार्यरत उमा ने देख ली। आज उनके हृदय में भी शान्ति न थी। पवित्र की ऐसी दशा देखकर उन्होंने उसे एकान्त में बुलाकर कहा 'सभी आनन्द कर रहे हैं बेटा फिर तुम्हीं क्यों उदास हो?'

कृत्रिम हंसी हंसकर पवित्र ने उत्तर दिया 'कौन कहता है मैं प्रसन्न नहीं हूं मौसी? ऐसे दिन मैं क्यों न प्रसन्न होऊंगा? मैं ही पास हुआ हूं, मेरे ही हेतु यह सब आयोजन हो रहा है, सबको खिलाना, पूजा देना—फिर मैं क्यों उदास रहूंगा मौसी?'

बात कहते कहते उसकी हृदय व्यथा जाग उठी। स्वर भारी होगया, किन्तु यह बात वह स्वयं न जान सका, फिर भी तीक्ष्ण बुद्धि शालिनी उमा से यह बात छिपी न रही।

पवित्र के सिर पर स्नेह से हाथ फेरते हुए करुण स्वर से

उमा ने कहा 'मुझे भ्रम में डालने का प्रयत्न न करो पवित्र। मैं तुम्हें जितना पहिचानती हूं उतना और कोई नहीं पहिचानता। कृत्रिम हंसी हंस कर तुम अपने पिता को धोखा दे सकते हो, परन्तु मैं नहीं ठगी जा सकती। मैं सब जानती हूं, सब समझती हूं; पर कर ही क्या सकती हूं? अपनी मौसी की गणना उसी श्रेणी में न करो पवित्र। तुम्हारी मौसी पुरुष नहीं स्त्री है। उसका हृदय पत्थर से नहीं गढ़ा गया। उसके हृदय में मातृ-स्नेह सजीव है।'

उमा की आंखों से आंसू बहकर पवित्र के ललाट पर गिर पड़े। अपने ही समान व्यथित, उसी दुख से पीड़ित एक और व्यक्ति को पाकर पवित्र का हृदय गल गया। मौसी की गोद में बच्चों की तरह मुंह छिपाकर उसने रुद्ध कंठ से पुकारा 'मौसी—'

उमा ने जल्दी से आंखें पोंछकर कहा 'तुम तो कलकत्ते जाते रहते हो पवित्र—'

मुंह उठाकर पवित्र ने कहा 'फिर उससे क्या होता है मौसी?'

मौसी के प्रश्न का आशय पवित्र अच्छी तरह समझ रहा था।

दबे स्वर से मौसी ने कहा 'एक बार वहां हो आओ बेटा! कितनी भयंकर व्यथा हृदय में लेकर वे दोनों यहां से चले गए थे। उस व्यथा का अनुमान कोई भी नहीं लगा सकता। समाज ने अपना कर्तव्य किया, परन्तु परिणाम दूसरों के लिए कितना हानिकारक हुआ है, यह उसने घूमकर भी नहीं देखा! समाज निष्ठुर और तुम्हारे पिता उससे भी अधिक निष्ठुर, तो क्या

तुम उन्हीं का अनुकरण करोगे पवित्र ? तुम्हें ऐसा करना शोभा नहीं देता बेटा ! वह तो तुम्हारी विवाहिता पत्नी है। जिस धर्म त्याग के डर से तुम्हारे पिता ने उसे घर से निकाल दिया उसी धर्म को साक्षी रखकर तुमने उसका पाणिग्रहण किया था; इसी कारण तो तुम्हें ऐसा अनुचित व्यवहार न करना चाहिए। उसका कलंक तुम्हें ही मेंटना होगा। उसे बचाकर तुम्हें समाज का सामना करना होगा। स्वामी-स्त्री का संबन्ध इतना निर्बल नहीं होता कि तनिक से आघात से छिन्न भिन्न हो जाए। हिंदू शास्त्र में इस सम्बन्ध का कितना महत्व है जानते हो ? नहीं बेटा, तुम्हें जाना होगा, तुम्हें उनका समाचार लेना होगा। उसको यहां आने का अधिकार नहीं है तो भी फिर भी वह ...'

'क्षमा करो मौसी मैं जा न सकूंगा।'

विस्मित हो मौसी ने कहा 'क्यों' तुम्हें शर्म आती है ? इसमें लज्जा की कौन सी बात है। तुम्हारा तो कुछ भी दोष नहीं है। वास्तव में तुम नहीं जानते थे कि वह किसकी लड़की है ? अनजाने ही तुमने विवाह कर लिया था। उसके पश्चात् समाज के भय से तुम्हारे पिता ने उसे जो दण्ड दिया है उसमें तुम्हारा क्या दोष है ? मैं कहती हूं तुम्हें इसमें तनिक भी शर्म न करनी चाहिए। तुम एक बार वहां हो आओ। उनकी दशा का चित्र अपनी आंखों के सामने खींचो तो ! तुम स्वयं भी कितनी यंत्रणा सहन कर रहे हो, फिर भी क्या जान सकोगे ?'

दृढ़ और शान्त स्वर से पवित्र ने उत्तर दिया 'नहीं मौसी फिर भी मैं नहीं जा सकता। मुझे समाज की पर्वाह नहीं, मैं धर्म नहीं मानता, मानता हूं केवल एक पिता जी को। उनका आदेश मैं उल्लङ्घन नहीं कर सकता मौसी। इससे अधिक अप-

मानिन मैं उन्हें नहीं करना चाहता। तुम पिता जी को इतना हृदय हीन न समझो। वे जितने ज्ञानी हैं वैसा ज्ञानी तो मुझे और कोई नहीं दिखाई देता। उस दिन की घटना सोचो, समस्त समाज हमारे घर एकत्रित था। सब लोगों के सामने जब यह बात खुली कि मैंने एक वेश्या कन्या से विवाह कर लिया है, उस समय तुमने देखा उनका ऊंचा सिर किस प्रकार नीचा होगया था। मौसी! पिता जीने मुझे अपराधी नहीं ठहराया, और वे ठहरा भी न सके। यही कुलकलंक तो मैं हूं। मेरी अनुपस्थिति के कारण वे दो दिन तक पागल हो उठे थे। नहीं; ऐसे पिता का आदेश मैं कभी नहीं भूल सकता। मैं वहां किसी प्रकार भी न जा सकूंगा। मेरी यही दशा ठीक है। उसके भाग्य में दुख बदा था, वह भोग रही है और आजीवन भोगेगी। मेरे भाग्य में यही लिखा था मैं भी उसे भोग रहा हूं, और भविष्य में भी उसे भोगने के लिए सहर्ष प्रस्तुत हूं। समाज गर्क हो जाए, धर्म चूल्हे में चला जाए, स्त्री भी चली जाए इसकी मुझे कुछ चिन्ता नहीं। बस मौसी आशीर्वाद दो कि मैं अपने पिता के योग्य बन सकूं।'

'पवित्र—'

इससे अधिक उमा और कुछ न कह सकीं। उन्होंने पवित्र का सिर हृदय से लगा लिया।

'यदि ऐसी ही बात है तो यही आशीर्वाद देती हूं और भगवान से यही प्रार्थना करूंगी।' फिर क्षणभर ठहर कर उन्होंने कहना आरंभ किया 'किन्तु मैं धैर्य नहीं धर सकती। चोरी से यदि बहू को पत्र लिखदूं तो? तुम अपना कर्तव्य पालन करो, परन्तु क्या मेरा यह कर्तव्य नहीं? उसके लिए

मुझे आज अत्यन्त वेदना हो रही है।'

उदास हो पवित्र ने कहा 'नहीं मौसी, तुम्हारा ऐसा करना उचित नहीं। यदि बाबा आज्ञा दे दें तो तुम्हारा ऐसा करना उचित है नहीं तो उसमें उनका अपमान होगा।'

'तो फिर रहने दो—'

क्षणभर चुप रहकर उमा काम करने चली गई और पवित्र बाहर निकल गया।

बाहर उस समय एक सभा बैठी हुई थी। आज भवशंकर बाबू का हृदय खुशी से बल्लियों उछल रहा था। वे बहुत कम हंसा करते थे, किन्तु आज वे बारबार खिल खिला रहे थे। मोहल्ले के पण्डित शिरोमणि महाशय को उद्देश कर वे कह रहे थे 'देख रहे हैं पण्डित जी! आज रामसय का कहीं भी पता नहीं, और कुछ महीने पहिले की वह बात तो सोचिए, मुझे स्वप्न में भी यह ख्याल नहीं था कि रामसय मेरे घर आवेगा। आप लोग तो सब देखते ही हैं वह क्या उस की छाया भी कभी मेरे दर्वाजे पर नहीं फट की। परन्तु उस दिन वह अयाचित ही आधमका उस में उस का उद्देश था मुझे अपदस्थ और अपमानित करना। इसी कारण तो यहां आकर उसने एक महा भारत कर डाला। आज कहीं वह दिखाई देता है? समस्त ग्राम यहाँ आकर भोजन कर गया। मेरे पवित्र ने एम० ए० पास कर लिया है। आज क्या वह हमारी यह प्रसन्नता सहन कर सकता है?'

शिरोमणी महाशय एक चुटकी नस्वार खींचते हुए बोले 'हरे राम! उसकी बात अब न कहिए। वह एक ही धूर्त है,

समझ रहे हैं—। उस के घर में ही कितना अनाचार और व्यभिचार हो रहा है, उस की ओर किसी का भी ध्यान नहीं, परन्तु आप की बार उस से न रहा गया।'

मन ही मन कुछ असंतुष्ट हो भवशंकर बाबू ने कहा 'किन्तु यह तो सोचना चाहिए था, कि हमने ऐसी बात जान बूझ कर की थी या भूल से ? इस की कुछ छान बीन तो होनी चाहिए थी ? मैं तो इस विवाह के विषय में कुछ भी नहीं जानता था। एक ही तो पुत्र, फिर उसका विवाह। तनिक सी सूचना मिलते ही मैं पचासों आदमी जुटा लेता। मुझे न बता कर—बच्चा ही तो है—भावुकता वश पवित्र एक अनुचित कार्य कर बैठा, इस के लिए राममय को क्या इतना उधम मचाना चाहिए था ? यदि मुझे एक बार वह चुपके से आकर बता जाता—यदि वह मेरा इतना ही शुभ चिन्तक था तो चुपचाप आकर मुझ से कह जाता फिर इस तरह तो दुनिया भर में कलंक की बात न फैलती। देख रहे हैं न शिरोमणी महाशय, इसका नाम है शत्रुता। इसी कारण तो उस दिन वह निमन्त्रण में आया था। भला बताओ तो मुझे समाज-च्युत करने की उस की क्या शक्ति है। मैं ठहरा समाज का मस्तक। मेरे पुत्र ने वेश्या कन्या के साथ विवाह कर लिया इस कारण मैं तो उस कन्या को ग्रहण नहीं कर सकता था। यह स्वप्न में भी नहीं हो सकता। बात मालूम होते ही उसी दिन उन दोनों को मैंने अपने यहाँ से निकाल दिया। एक क्षण भी नहीं ठहरने दिया एक क्षण। उस में बदनामी किस की थी मेरी ही तो। हम समाज से बहिष्कृत कर दिए जाते, विधर्मी हो जाते, इस में उनका क्या नुकसान था।'

शिरोमणी महाशय आनन्द पूर्वक सिर हिलाते हुए बोले 'ठीक आप एक दम ठीक कहते हैं। नारायण! नारायण! आप क्या ऐसे वैसे आदमी हैं ? पुराणों में लिखा है—जो जिस योग्य होता है भगवान उस पर उतना ही भार डालते हैं। इसका साक्षात प्रमाण आप ही तो हैं। आप, इतने योग्य होने के कारण ही तो, इतनी बड़ी जमीदारी और समाज का संचालन कर रहे हैं। उस दिन वेश्या कन्या को त्याग कर आपने जो आदर्श समाज के सामने रखा उस के कारण समाज आपकी भूरि २ प्रशंसा करता है। सभी कहते हैं 'समाज में ऐसा आदमी होना असम्भव है।' राममय बाबू जानते हैं कि श्री हरी की आप पर पूर्ण कृपा दृष्टि है, फिर भी क्यों उन्होंने जान बूझ कर समाज के सम्मुख आपको लांछित करना चाहा। आखिर उन्हें मुंह की खानी पड़ी। अपमानित करने की जगह समस्त ग्राम ने आप का जै २ कार किया। इस प्रकार रंग पलटा देख कर ही तो अब वे मुंह छुपाते फिरते हैं। लोगों के सामने भी अब वे घर से बाहर नहीं निकलते हैं सरकार।'

ऐसी प्रशंसा सुन कर भवशंकर बाबू फूले न समाए। वे शान्त हो हुक्का पीने लगे। इधर पवित्र भी धीरे धीरे बाहर चला गया।

[६]

हृदय की वह वेदना तो कम नहीं हो रही थी। कभी २ दो चार दिन के लिए आराम हो जाता, परन्तु फिर किसी दिन वह इतनी तीव्र हो उठती कि उसकी यंत्रणा से वृद्ध जलधर बाबू का मुंह नीला पड़ जाता। यह सब होते हुए भी वे पूर्वी से कुछ न कहते।

किंतु पूर्वी बिना कहे ही सब समझ गई। अपनी वेदना वह भूल गई। आखिर एक दिन वृद्ध जलधर बाबू को सूचित किए बिना ही डाक्टर बुलवाया।

डाक्टर ने आकर परीक्षा की और दुखित हो बोले 'हृद-पिण्ड की बीमारी है। बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है तनिक से आघात में भी हार्ट फेल हो सकता है।'

व्याकुल हो नाना के वक्ष स्थल पर हाथ फेरते हुए रुद्ध कण्ठ से पूर्वी ने पुकारा 'नाना—नाना—'

आज अकस्मात उसे ऐसा जान पड़ा कि अब वह भविष्य में यह शब्द न उच्चारण कर सकेगी। ज्ञात होता है कि समस्त नश्वर वस्तुओं की तरह यह भी नाश हो जाएगा। इस संसार में केवल एक ही हृदय में उस के लिए सहानुभूति शेष थी, परन्तु आज उसे उस से भी हाथ धोना पड़ेगा। वह चिर अभागिनी है। 'मां' शब्द का उच्चारण करना आज उस के लिए दुर्लभ है, 'मां' शब्द के उच्चारण मात्र से ही उसका कण्ठ जड़ हो जाता है। 'नाना' पुकार कर ही वह समस्त वेदना और अपमान भूल जाती है। इसी एक नाम में सब नाम

सार्थक कर लेती है, परन्तु आज इस अभागिनी के भाग्य में यह भी सुख न रहेगा। हठात् उच्छ्वसित हो पूर्वी रो पड़ी 'नाना—'

'आह! पगली आंखों में आंसू? क्यों बोलो तो? डाक्टर कह गया है कि मुझे हार्ट डिजीज हो गई है, किसी समय भी हार्ट फेल हो सकता है। इसीलिए तो? वाह रे—यह एक दम झूठ है। मालूम होता है तू कुछ भी नहीं समझी? बात बढ़ा कर कहना तो डाक्टरों का स्वभाव ही है। रोग न रहने पर भी वे उसका अस्तित्व प्रमाणित कर देते हैं। तनिक सी सर्दी और बुखार हो जाने पर वे तुरन्त ही ब्राङ्काइटस की शंका उत्पन्न कर देते हैं। पीठ और छाती में दर्द होने पर निमोनिया प्रमाणित कर देंगे। तू अभी बच्ची है, इन चालाकियों को क्या जाने? इस में उनका क्या स्वार्थ रहता है जानती है? रोगी के सम्बन्धी डरकर अधिक पैसे दें। मैंने तो तुझे इसीलिए मना कर दिया था—डाक्टर न बुलाओ, व्यर्थ ही चिन्ता बढ़ जाएगी? देख बुड्ढे की बात सच निकली न?'

किन्तु इन सब बातों से पूर्वी न बहकी। उसने अश्रु पूर्ण नेत्रों से कहा 'नाना तुम्हारा चेहरा बिल्कुल विकृत हो गया है, तुम देख नहीं सकते हो—'

वृद्ध जलधर उसे धमकाते हुए तनिक मुंह बना कर बोले 'अपने शरीर की अवस्था मैं नहीं समझता हूं तो कौन समझता है वह डाक्टर? केवल एक बार स्टेथिस कोप से पीठ और छाती देख लेने मात्र से ही क्या वह मुझ से अधिक जान गया? जा, जा, अपना काम देख। देख तो बिल्ली का बच्चा भूखा होगा, उसे कुछ खिला, जा। वह देख रसोई घर में कुछ खुट खुटा रहा

है। वह पाजी भूख से व्याकुल हो दूध चुरा रहा है। चुराएगा क्यों नहीं? तू तो उसे पेट भर खाने को भी नहीं देती। फिर भला वह क्यों न चोरी करे? यदि उसने सचमुच ही खा लिया होता तो तू यह कभी न कह सकती थी कि उसने दूध पी लिया है, मछली खा ली है।'

पूर्वी ने उत्कण्ठित हो कहा 'नहीं वह कुछ नहीं खा सकता नाना। सब चीजें अच्छी तरह ढकी हैं। किन्तु नाना—'

'फिर वही रट? यदि इसी तरह विरक्त करोगी—तो बोलो मैं कै दिन जिऊंगा? मालूम होता है इसी प्रकार विरक्त कर तू मुझे मार डालेगी। ले, आ, काम नहीं है तो वह किताब ले आ। कल शाम को मैं लाइब्रेरी से तेरे लिए एक पुस्तक ले आया हूं। परन्तु इस प्रकार हर समय तुझे गम्भीर देख कर कुछ कहने का साहस नहीं होता था।'

पूर्वी पुस्तक ले आई और स्नेहसिक्त स्वर से बोली 'नहीं नाना अब मैं कभी भी तुम्हें दुख न दूंगी, फिर पहले ही की तरह हो जाऊंगी। पहिले की तरह हम खेलेंगे, पढ़ेंगे। बस अब तुम अच्छे हो जाओ नाना।'

विरक्त हो वृद्ध ने कहा 'फिर वही बात। मुझे क्या हुआ है कहो तो? तू व्यर्थ ही तिल का ताड़ बना रही है। अगर तू इसी प्रकार किया करेगी तो मैं तुझ से बोलना बन्द कर दूंगा।'

'ना, ना, नाना जी अब कभी ऐसी बात न कहूंगी। जबान पर भी न लाऊंगी।'

पूर्वी अपनी वेदना भूल कर नाना महाशय की वेदना दूर करने में व्यस्त हो गई। जिस में उन्हें तनिक भी कष्ट

न हो वही बात करने की चेष्टा करती जिस दृश्य को उसने विदा कर दिया था उसका फिर आह्वान न किया। अब वह फिर पहिले की तरह खेलने और पढ़ने लगी।

पूर्वी कभी कभी उन्हें छत पर ले जा कर मुक्त वायु का सेवन कराती। एक दिन इसी प्रकार छत पर बैठ कर नाना का प्रिय सितार लाकर वह उन से बजाने का अनुरोध करने लगी।

बहुत दिनों से जलधर बाबू ने सितार बजाना बन्द कर दिया था। पूर्वी के विवाह के पश्चात तो दो वर्ष तक उन्होंने उसे छुआ तक नहीं। उस पर न जाने कितनी गर्द और मकड़ी के जाले लग गए थे और वह उसी दशामें खूंटी पर टंगा हुआ था। आज बहुत दिनों के पश्चात वह जलधर बाबू के हाथ में आया।

किन्तु रागिनी न प्रसन्न हुई। जिस मधुर स्वर से वे आलाप भरते थे वह आज न जाने कहां लोप हो गया था। गद्गद् हो वृद्ध ने कहा 'क्या करने के लिए आज तुम ने सितार दिया है बेटी? इसमें तो आज मैं कोई स्वर नहीं भर पा रहा हूं।'

दीन हो पूर्वी ने कहा 'तुम सब कुछ कर सकते हो नाना। दो वर्ष से बेसुरी रागिनी बज रही है, किन्तु तनिक चेष्टा करने पर वह फिर अपने पूर्व स्वर में मुखरित हो उठेगी, उसका स्वर मधुर और आह्लाद कारी उठेगा।'

सितार झनक उठी परन्तु यह तो वह झंकार नहीं है जिस स्वर के प्रत्येक झंकार के साथ हृदय में आनन्द का स्रोत बहने लगता था वह स्वर आज कहाँ है? यह तो रुदन

का स्वर है, वेदना पूर्ण गान है। आह ! आज वे सुखमय स्वप्न कहां हैं। और कहां है वह आनन्द का स्रोत ?

स्वर थोड़ी देर गूंज कर शान्त हो गया। पूर्वी ने चुप चाप आँखें पोंछी।

'नाना आज यह कैसा स्वर भर रहे हो। यह तो रुदन और करुणा से परिपूर्ण है तुम्हारा हर्षोत्फुल्ल स्वर कहां है नाना ?'

रुद्ध कण्ठ से जलधर बाबू ने उत्तर दिया 'खो बैठा बेटी ! आज मैं उसे खो बैठा हूं। जो खो गया है उसे ढूंढ नहीं पाता हूं। इस जीवन में हानि के सिवाय लाभ कहीं नहीं दिखाई देता। मेरा भाग्य फूटा है। अपना जो कुछ था धीरे २ मैं सब कुछ खो बैठा। लोग खोई हुई वस्तु को ढूंढने पर पा जाते हैं, परन्तु मैंने आज तक प्रयत्न करने पर भी कुछ नहीं पाया, और भविष्य में भी कुछ पाने की आशा नहीं बेटी। जीवन के भीषण पथ पर चलते २ श्रान्त और क्लान्त हो मैं आज तीर पर आ बैठा हूं। बैठे २ सोचता हूं मेरा क्या था और कितना चला गया। जीवन में पाया कुछ भी नहीं। परन्तु जीवन में कुछ २ पाने की आशा मैंने कभी नहीं की यह बात कहने की क्षमता अब भी मुझ में नहीं है।'

'क्या पाने की आशा की थी नाना ?' यह कहते कहते पूर्वी का शब्द कांप उठा।

धीर कण्ठ से वृद्ध जलधर ने उत्तर दिया 'समस्त खोजने पर मैंने क्या पाने की आशा की थी यह कहना कठिन है बेटी ! मरते दम तक मनुष्य आशा नहीं छोड़ता। पानी में डूबता हुआ मनुष्य तिनके का सहारा पाकर यही सोचता है कि

शायद इसी के सहारे उसका जीवन बच सके और इसी कारण वह उसे और भी दृढ़ता से पकड़ लेता है। परन्तु अब वे सब बातें कहकर क्या होगा बेटी कुछ फल नहीं।'

'चौधरी महाशय—घर में हैं?'

पूर्वी चकित हो बोल उठी 'कोई तुम्हें बुला रहा है नाना।'

हताश हो जलधर बाबू ने उत्तर दिया 'अब कौन बुलाएगा?'

मार्ग पर से किसी ने पुकारा 'चौधरी महाशय?'

'चलो नाना तुम्हें नीचे जाना ही होगा। कौन सज्जन-पुरुष बुला रहे हैं देखना चाहिए।'

जलधर महाशय को बैठक में पहुँचाकर पूर्वी पास के कमरे में चली गई।

जलधर बाबू ने द्वार खोल दिया। सामने ही वनमाली खड़े थे।

किसी आवश्यक कार्यवश वे कलकत्ते आए थे। ऐसे अवसर पर वे दुखिया पूर्वी को देखने का लोभ संवरण न कर सके। उन्हें उसी दिन लौट आने की भवशंकर बाबू की आज्ञा थी। परन्तु आज उन्होंने आज्ञा उल्लङ्घन करने का निश्चय कर लिया था। इस बात से उन्हें आज बहुत दुख हो रहा था। कारण आजतक उन्होंने स्वामी की आज्ञा अक्षरशः पालन की थी। सोच रहे थे कि आज यह नियम टूट जाएगा।

धनी का समस्त जग साथी है, परन्तु दरिद्र का कोई भी नहीं। धनी सरलता पूर्वक समाज के शिरोमणि बन सकते हैं

या यों कहिये कि समाज उनकी उंगलियों पर नाचता है। परन्तु दरिद्र व्यक्ति समाज से पीड़ित और प्रताड़ित हो चुपचाप आंसू बहा देता है।

दरिद्र का दुख वनमाली समझते थे। समाज पीड़ितों की व्यथा वे स्वयं अनुभव करते थे। इसी कारण समाज के विरुद्ध खड़े होकर युद्ध करने के लिए सदा वे प्रस्तुत रहते। किन्तु हाय! साधारण मनुष्य होने के कारण समाज उनकी बातों की ओर तनिक भी ध्यान नहीं देता था। उनकी युक्ति की सार गर्भिता का विचार किए बिना ही सब के सब हंस पड़ते। परन्तु उनकी बात का समर्थन करने वाला समाज में एक भी धनिक होता तो समाज उनकी बात अवश्य सुनता। लोग उस बात पर अनुकरण करते या न करते फिर भी एक बार उसे सुनते अवश्य। भवशंकर बाबू भी सदा उनके विपक्ष में ही रहते। इस प्रकार मत विरोध होने पर भी वनमाली स्वामिभक्त थे। भवशंकर बाबू के संसार को वे अपना संसार समझते।

आज इस गृह का द्वार खटखटाते समय भवशंकर बाबू की क्रुद्ध मूर्ति मानों सम्मुख आ खड़ी हुई। यदि किसी तरह भी उन्होंने यह सुन पाया कि वनमाली १२ नं० कोलू टोले वाले मकान में गए थे, तो फिर खैर न होगी। किन्तु अब पीछे पैर रखने की भी इच्छा न थी। जो कुछ होगा देखा जाएगा। वे सब सहन कर लेंगे। भवशंकर बाबू जो भी दण्ड दें वे उसे चुपचाप ग्रहण कर लेंगे।

द्वार खुलते ही वनमाली बाबू ने जलधर महाशय को देखा। दो वर्ष पूर्व उन्होंने जिन जलधर महाशय को देखा था उनको तुलना सामने खड़ी हुई मूर्ति से करने पर वे चकित हो

देखते रह गए। दो वर्ष का दुख-पूर्ण समय व्यतीत होगया। इसी अल्प काल में वे शिथिल होगए थे।

'प्रणाम करता हूं चौधरी महाशय।' उनके प्रणाम करने पर जलधर अत्यन्त चकित हो पीछे हट गए, परन्तु वनमाली बाबू को वे पहिचान न सके।

वनमाली बाबू ने आगे बढ़कर कहा 'ज्ञात होता है आपने मुझे पहिचाना नहीं। मैं भवशंकर बाबू का दीवान वनमाली-राय हूं। सोचकर देखिए दो वर्ष पूर्व नूरपुर में आप से मेरी मुलाकात हुई थी।'

'नूरपुर—भवशंकर बाबू के दीवान।'

जलधर चौंक पड़े। बहुत देर तक उनके मुख से कोई बात न निकली। थोड़ी देर में फिर अपने को संभालकर उन्होंने कहा 'आइए, आइए। दीवान जी इधर बैठिए। सचमुच ही आपको मैंने नहीं पहिचाना। अब आंखों से बहुत कम दिखाई देने लगा है वनमाली बाबू, इसी कारण पहिचान न सका। बैठिए, बैठिए, इसी तख्त पोश पर बैठिए।'

बैठते हुए वनमाली राय ने कहा 'केवल दो ही वर्षों में आप की आंखें इतनी खराब हो गईं चौधरी महाशय, तब तो आप की आँखें बिलकुल ठीक थीं।'

वृद्ध ने नीरस हंसी हंसते हुए उत्तर दिया 'वह दिन चले गये वनमाली बाबू। जो दिन निकल जाता है वह लौट कर तो नहीं आता। दिनों के साथ ही तो शरीर बल दृष्टि इत्यादि सभी क्षीण हुए जा रहे हैं।' यह कहते हुए उन्होंने एक आह भरी। व्यथित वनमाली राय उनके शोकाछन्न मुख की ओर

निरखते ही रह गए। फिर सहसा उनके मुख से एक आह निकल पड़ी।

उस के पश्चात्--वहां सब ठीक तो हैं ? पवित्र, उस के पिता और मौसी ?'

वनमाली बाबू ने सिर हिलाते हुए उत्तर दिया 'सब आनन्द मंगल है।' इस के पश्चात् वृद्ध जलधर न जाने कितने प्रश्न करते गए और वनमाली राय भी उत्तर देते गए।

घूम फिर कर पवित्र की बात उठी 'वनमाली बाबू क्या इन दो वर्षों के बीच पवित्र एक बार भी कलकत्ते न आया ?'

वनमाली झूठ न बोल सके। इस सरल हृदय अति वृद्ध मृत्यु पथ यात्री के सम्मुख उन के मुख से झूठ न निकला। उन्होंने उत्तर दिया 'हां, वह तो अकसर कलकत्ते आता रहता है।'

'अकसर—आता है ?'

वृद्ध चुप हो गए। 'अकसर आता है' किन्तु इस से उन्हें क्या मतलब ? विशाल कलकत्ते के एक क्षुद्र कोने में वे दोनों पड़े हैं, इस की कौन खबर रखता है। यहां आने पर उसे इन से अवश्य मिलना ही चाहिए, यह तो आवश्यक नहीं। समस्त सम्बन्ध तो कभी का टूट चुका है फिर भला वह क्यों आए ?

कोई सम्बन्ध नहीं रहा। हाय ! बात कहना कितना सहज है, उतना ही कार्य करना सहज हो तो हृदय पर जो दाग चित्र के समान अंकित हो गया है वह किसी तरह नहीं मेटा जा सकता। जिस चिता की अग्नि धांय २ कर

जल रही हो उसे बुझाने की चेष्टा करना व्यर्थ ही है। कुछ सम्बन्ध नहीं। यह बात केवल जोर दार शब्दों में कहने से ही क्या होता है। क्या इस से कभी नाता टूट सकता है?

कम्पित कण्ठ से जलधर महाशय ने पुकारा 'वनमाली बाबू—'

'कहिए—'

जबान पर आई हुई बात को रोकते हुए जलधर बाबू ने कहा 'नहीं! मैं कह रहा था कि क्या आज आप यहां ठहरेंगे?'

वे कोई दुख पूर्ण बात कहते २ रुक गये यह बात बुद्धिमान वनमाली राय तुरन्त समझ गए। परन्तु फिर इस विषय में और कुछ न कह उन्होंने कहा 'जब आया ही हूं तो एक दिन रह कर ही जाऊंगा। मैं निर्वासिता पूर्वी को एक बार देखने आया हूं। चौधरी महाशय केवल देख कर ही संतोष न होगा उस के हाथ का बना भोजन भी खाऊंगा। उस का बनाया भोजन समाज ने नहीं खाया, इस कारण उसे मुझे खिलाने में संकोच न करना चाहिए। मैं भवशंकर नहीं, पवित्र नहीं, मैं हूं समाज से निर्वासित अपनी मां का पुत्र। मां कोई भी क्यों न हो फिर भी पुत्र के लिए चिर-वन्द्य है। एक बार माँ को बुलाइये मैं स्वयं उस से कहूंगा कि वह मुझे अपने हाथ से प्रसाद बनाकर परोसे।'

लज्जित और कुण्ठित पूर्वी किसी तरह आगे न आ सकी। अपनी बात स्मरण कर वह स्वयं लज्जित हो रही थी। अपनी हीनता उसके समस्त शरीर में व्याप्त हो रही थी।

स्वयं वनमाली बाबू उस के सम्मुख जा खड़े हुए और

हंसते हुए बोले 'तुम्हें तो इतना संकोच न करना चाहिए मां लक्ष्मी। यदि संतान के सम्मुख ही लज्जा करोगी तो फिर लज्जा न करने का स्थान कहां शेष रह जाएगा। इस प्रकार तो काम न चलेगा मां। खूब समझता हूं कि इस वृद्ध संतान को तुम ताड़ना कर सकती हो। परन्तु तुम्हारा यह पुत्र भी किसी तरह अपना हठ छोड़ने वाला नहीं। लाख प्रयत्न करने पर भी यह मां का आंचल न छोड़ेगा। तुम्हें भात बना कर मुझे खिलाना ही होगा। मुझे भूखा लौटा दोगी क्या? यह कभी नहीं हो सकेगा।'

पूर्वी ने रुद्ध कण्ठ से पूछा 'मेरी बनाई हुई रसोई आप खाएंगे काका?'

उस के मुख से काका सम्बोधन सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हो वनमाली राय ने कहा 'खाऊंगा, जरूर खाऊंगा। एक बार खिला कर तो देखो मां हांडी सफाचट न कर जाऊं तो मेरा नाम वनमाली नहीं। पेट मे भूख की कैसी भीषण ज्वाला जल रही है। क्या इसे तुम मां होकर भी नहीं समझ रही हो?'

'किन्तु मैं तो वेश्या कन्या हूं काका—'

करुण स्वर से वनमाली राय बोले 'फिर वे ही सड़ी गली बातें? सुनते २ तो कान पक गये। इस संसार में पतित कौन और महत कौन है मां? दोनों ही एक जगह से आए हैं, उसी जगह जाएंगे और वहीं जाकर उन दोनों की समाप्ति होगी। इस के लिए हमें व्यस्त होने का कोई कारण नहीं। हम ने तो तुम्हें पाया है, तुम्हारी माता को तो नहीं। फिर क्यों हम उन के पाप का विचार करें। माता पिता के पाप

से यदि संतान घृणित हो सकती है, उसे दण्ड दिया जा सकता है तो एक दिन दण्ड दाता को भी कठिन दण्ड भोगना पड़ेगा। भगवान के यहां तो उसे कोई दण्ड से नहीं बचा सकेगा।'

सजल नयनों से पूर्वी ने वनमाली राय के चरणों की धूलि ग्रहण कर अपने माथे से लगाई और फिर चुपचाप अश्रु पोंछती हुई संयत कण्ठ से बोली 'बैठिए काका, मैं अभी रसोई चढ़ाती हूं।'

'जल्दी करना मां बहुत भूख लगी है।'

प्रसन्न हो पूर्वी अन्दर चली गई।

---

[१०]

वह विवाह ही नहीं था। यह बात प्रमाणित करने में भवशंकर बाबू ने कुछ भी उठा न रखा। कांटा पाड़ा के जमींदार वरदविष्णु बाबू की एकमात्र सुन्दरी कन्या के साथ विवाह निश्चित करने के हेतु वे एक बार फिर उत्साहित हो उठे।

यह समाचार सुन पवित्र का मुख सूख गया 'अब फिर विवाह? उसका धर्म-संगत विवाह तो एक बार हो चुका है।'

उसने अपनी एकमात्र आधार मौसी से जाकर कहा 'मौसी किसी तरह भी हो तुम्हें कुछ करना ही होगा, अन्यथा कोई उपाय नहीं।'

'मैं क्या कर सकती हूं बेटा?'

'जिस प्रकार भी हो विवाह रुकवा दो।'

आजकल पवित्र पहिले की तरह ही होगया था। उसी प्रकार सदा सर्वदा हंसते रहना, पढ़ना लिखना, मौसी के कामों में सहायता करना इत्यादि सभी बातें पहिले जैसी ही होने लगी थीं। इन कामों में अनभ्यस्त होने के कारण मौसी को सहायता देते समय वह कुछ का कुछ कर बैठता और फिर अप्रतिभ हो हंसने लगता। यह सब होने पर भी कई वर्ष पूर्व की वह बात उसके हृदय में अपनी स्मृति शेष छोड़ गई है। उमा यह बात नहीं जानती थी। पवित्र को पहिले की तरह हंसता खेलता देख कर वह भी उसे सब लोगों की तरह भूल समझ बैठी।

विस्मित हो मौसी ने पवित्र की ओर देखा। पवित्र ने दूसरी ओर मुंह घुमा लिया।

उमा ने कहा 'विवाह न करने के प्रण पर क्या अब भी दृढ़ रहा चाहते हो?'

उसी प्रकार दूसरी ओर देखते हुए पवित्र ने उत्तर दिया 'हां, मौसी। जब मेरा विवाह हो चुका है तो क्या दूसरा विवाह करना पाप नहीं है?'

'किन्तु उस स्त्री को तुम ग्रहण नहीं कर सकते हो, यह बात तो तुम भी कहते हो।'

क्षणभर पूर्वी के मुख का चिन्तन कर पवित्र ने कहा 'हां, यह बात सच है मैं उसे ग्रहण नहीं कर सकता, फिर भी मौसी मैं विवाह नहीं करूंगा। यदि किसी प्रकार यह बात तुम बाबा से कहो तो—'

उमा तनिक सिहर कर बोली 'तुम क्या पागल हो गये हो

पवित्र ! क्या मैं उनसे यह बात कहने का साहस कर सकती हूं ? उनके सम्मुख साधारण बात करने का भी साहस मुझे नहीं होता, फिर तुम्हीं सोचो इतनी बड़ी बात मैं कैसे कह सकती हूं।

पवित्र किसी तरह न माना वह हठ कर बोला 'असम्भव कह कर काम नहीं चलेगा मौसी। यह काम तुम्हें ही करना होगा, कारण तुम्हारे सिवाय इसे और कोई कर भी नहीं सकता। मैं कह सकता था, परन्तु विचार करने पर मैंने यही निश्चय किया कि मेरा कहना उचित नहीं। ऐसा करने से पिता जी के आत्माभिमान को दारुण आघात पहुँचेगा। वे चिढ़ जाएंगे, और प्रत्येक क्षण यही सोचेंगे कि मैं उनके मुंह पर ही जवाब देने आया हूं मौसी—'

इसी आर्त स्वर ने मौसी को विचलित कर दिया। उन्होंने कहा 'ऐसा ही होगा बेटा। मैं यही कह दूंगी। मैं उनके कान पर बात डाल दूंगी फिर वे चाहे जो कुछ कहें। तुम्हें उनका सामना न करना होगा। उनका वह क्रोध पहिले मेरे ऊपर ही पड़ने दो। उसके पश्चात् यदि वह चारों ओर फैल भी जाए तो भी वह अधिक हानि न पहुँचा सकेगा। अच्छा जाओ मैं सब सह लूंगी। उसके लिए तुम तैयार रहना।'

दिनभर में केवल एकबार भोजन के समय भवशंकर बाबू अन्तःपुर में आते थे। उमा ने निश्चय कर लिया कि वह उसी समय उनसे ये सब बातें कहेंगी।

किन्तु उस दिन भवशंकर बाबू का गम्भीर मुख देखकर उन्हें कुछ कहने का साहस न हुआ। इतनी अवस्था हो जाने पर भी बचपन की तरह वे भवशंकर बाबू से डरती हैं। कोई

बात पूछने का साहस करने पर भी उनके कण्ठ से अब भी शब्द नहीं फूटता। परन्तु आज न कहने से भी तो काम नहीं चलेगा, कारण पवित्र को वे वचन दे चुके हैं।

अब कहूं, अब कहूं, यह सोचते २ भवशंकर बाबू भोजन समाप्त कर कुल्ला करने लगे।

अब चुप रहना ठीक नहीं। अभी थोड़ी देर में वे शयन-गृह में प्रवेश कर द्वार बन्द कर लेंगे और फिर एक घंटे बाद बाहर घूमने चले जायेंगे।

जरा गला साफ कर उन्होंने पुकारा 'दादामणि—एक बात—'

भवशंकर बाबू ने कहा 'क्या कहती हो उमा ?'

उमा ने धीरे २ कहा 'पवित्र की इच्छा—'

भवें तानकर वे बोले 'पवित्र की क्या इच्छा है ? जो कुछ कहना चाहती हो एक दम कह डालो, और अधिक मैं नहीं ठहर सकता।'

उनकी मुखाकृति और उससे भी कठोर बातें सुनकर उमा का हृदय धड़कने लगा। उन्होंने शीघ्रता से कह डाला 'पवित्र की इच्छा नहीं है कि अब वह फ़िर विवाह करे। इसी कारण वह मुझे—'

'बस करो' गरजकर भवशंकर बाबू ने कहा 'क्या तुम कहना चाहती हो कि उस वेश्या कन्या को लेकर अपना संसार बसाने की उसकी इच्छा है, मेरे पूर्वजों की पुण्य भूमि को वह कलुषित करना चाहता है ?'

कांपते हुए उमा ने उत्तर दिया 'नहीं वह यह कहता है कि वह विवाह नहीं करेगा। किन्तु पूर्वी के साथ रहने की भी उसकी इच्छा नहीं है।'

भवशंकर बाबू हंसे और क्षणभर में उनका कर्कश नाद लोप हो गया। 'आश्चर्य की बात है उमा, उसका मतलब मैं खूब समझ रहा हूं। उसके विवाह न करने का मुख्य कारण यही है कि उस वेश्या कन्या को वह चाहता है। मेरे कुल में वह कुल कलंक उत्पन्न हुआ है। परन्तु मेरे जीवित रहते यह सब अनाचार कभी न हो सकेंगे।' उनका स्वर अत्यन्त कठोर हो गया था।

'अच्छा उसे एक बार मेरे पास भेज दो। मैं ऊपर जा रहा हूं।' सीढ़ियों पर खड़ाऊं का खटखट शब्द करते हुए भवशंकर बाबू ऊपर चले गए।

वे तो चले गए किन्तु पवित्र उनके सम्मुख किस प्रकार जाए यह एक भारी समस्या थी। उसके पिता अत्यन्त कठोर विचारक हैं, बार २ उसका अपराध क्षमा नहीं कर सकते। दो बार अपराध कर वह क्षमा पा चुका है। इस बार निश्चय ही उसे दण्ड मिलेगा। उस दण्ड को स्मरण कर पवित्र कांप उठा।

किन्तु वही 'पवित्र' आह्वान - क्या यह सुन कर भी वह चुप बैठा रह सकता है ? उसे जाना ही होगा। अब छिप कर काम न चलेगा। चुम्बक जिस प्रकार लोहे को एक दम खींच लेता है, उसी प्रकार भवशंकर बाबू का आह्वान लोगों को उनके सम्मुख ला उपस्थित करना था।

धीरे २ उसे आगे बढ़ना पड़ा, परन्तु द्वार के पास आकर वह ठिठक कर खड़ा हो गया।

कर्कश कण्ठ से पिता ने कहा 'इधर आओ वहाँ क्यों खड़े हो ?'

पवित्र ने अन्दर प्रवेश किया।

'तूने अपनी मौसी से जो बात कही है उसे मैं सुन चुका हूं। तेरी क्या इच्छा है मैं भी तो सुनूं ?'

पवित्र चुप था।

हृदय की क्रोधाग्नि भड़क उठना चाहती थी, परन्तु चतुर भवशंकर बाबू ने उसे दमन कर शांत स्वर से कहा 'क्या तेरी इच्छा उस वेश्या कन्या को इस घर में रखने की है ?'

गद्गद् हो पवित्र ने उत्तर दिया 'नहीं बाबा ! मैं आप के चरण छू कर शपथ खाता हूं कि बिना आप की आज्ञा के मैं उसका मुंह भी न देखूंगा। मैं आप का पुत्र हूं। मेरी प्रतिज्ञा, मेरी बात अटल है।'

तनिक प्रसन्न हो भवशंकर बाबू ने कहा 'ठीक है, और इसी प्रतिज्ञा का सदा स्मरण रखना। मेरे पवित्र गृह में वेश्या कन्या के पदार्पण करने के कारण यह घर अपवित्र हो गया था। उसने ठाकुर पूजा की सामग्री नहीं छुई, फिर भी केवल उसके आने मात्र से ही मुझे प्रायश्चित करना पड़ा। अब वह वेश्या कन्या इस घर में आए—यह एक दम असम्भव है।'

पवित्र नीचा सिर किए बैठा रहा। हुक्का पीते हुए भव-

शंकर बाबू ने कहा 'अच्छा, दूसरा विवाह क्यों नहीं करना चाहते सुनू तो ?'

पवित्र ! निश्चल, निश्चेष्ट था।

हुक्के की निगाली मुंह से हटाते हुए भवशंकर बाबू ने कहा 'चुप क्यों हो ?'

'किसी कारण वश ही तो तुम दूसरा विवाह नहीं करना चाहते हो। जब तक तुम कुछ बताओगे नहीं, मैं क्या जानूंगा ?'

धीमी आवाज से पवित्र ने उत्तर दिया 'कारण कुछ नहीं।'

'कुछ भी नहीं ?' भवशंकर बाबू ने क्रोधित और विस्मित हो तीव्र दृष्टि से पुत्र की ओर देखते हुए कहा 'कारण कुछ भी नहीं, यह बात कह कर तुम उमा की आंखों में धूल झोंक सकते हो। परन्तु मुझे धोखा नहीं दे सकते। यह बात तुम जानते हो ? कि मैं तो तुम्हें इस प्रकार छोड़ने वाला नहीं। कोई न कोई कारण तुम्हें अवश्य बताना ही होगा। तभी छुटकारा होगा।'

उच्छ्वसित कण्ठ से पवित्र ने उत्तर दिया 'सच बात कहता हूं बाबा ? कारण मैं स्वयं ही नहीं समझ पा रहा हूं। मुझे क्षमा कीजिए बाबा। मुझे छोड़ दीजिए मैं विवाह नहीं करूंगा। कर नहीं सकूंगा। यदि आप उन लोगों से कुछ न कह सकें तो मुझे आज्ञा दीजिए मैं स्वयं जाकर उन से कह आऊंगा कि विवाह नहीं हो सकता। मैं समस्त दोष अपने सिर पर ले लूंगा बाबा।'

भवशंकर बाबू गरज कर बोले 'किन्तु जब तक मैं जीवित

हूं तब तक लोग तुम्हारे बुरे कर्मों के लिए मुझे ही दोषी ठहराएंगे। इस का फल मुझे ही भोगना पड़ेगा। क्या तुम यह नहीं जानते कि तुम्हारे कारण ही मुझे कई बार अपमानित होना पड़ा है। इस बार भी जिसे साधारण बात समझ रहे हो वह साधारण नहीं एक जटिल समस्या है। सब जगह निमंत्रण पत्र भेजे जा चुके हैं। आज संध्या से नातेदार आने लगेंगे, ऐसी मुझे सूचना मिली है। विवाह के केवल पांच दिन शेष हैं। इस समय विवाह न करना कितनी बड़ी भूल होगी? कितने अफसोस की बात है कि तुम्हारे ऐसे शिक्षित और विचक्षण लड़के को मुझे ये सब बातें समझानी पड़ रही हैं। देखो सभी जगह बचपन करना शोभा नहीं देता। दिमाग ठिकाने रख कर काम करो। वेश्या-कन्या तुम्हारी पत्नी नहीं हो सकती। यथार्थ में स्त्री होने का अधिकार इसी लड़की को है। जाओ बहुत बचपन न दिखाओ। अब तुम समझदार हो गए हो। तनिक समझ बूझकर काम करना सीखो। तुम्हें यह विवाह करना ही होगा। यही मेरा निश्चय है। जाओ व्यर्थ की बातों को सोचना छोड़कर वास्तविक घटना पर विचार करो।'

पवित्र क्या उत्तर दे वह स्वयं ही नहीं समझ पा रहा था, इसी कारण वह चुप खड़ा रहा। अब वह ऐसी बात न कह बैठे इस कारण भवशंकर बाबू ने मुंह से निगाली हटाते हुए जम्हाई लेकर कहा 'जाओ २ नींद बहुत सता रही है, अब बैठा नहीं जाता। उठो, जाओ यहां से?'

इस प्रकार जबरदस्ती पवित्र को कमरे से बाहर निकाल कर भवशंकर बाबू ने द्वार बन्द कर दिए।

बाहर आते ही पवित्र को एक बात सूझ गई। उसने द्वार पर हाथ मार कर पुकारा 'बाबा—?'

'इस समय चले जाओ। थोड़ी देर सो लूं, इसके पश्चात् जो कुछ कहना हो वह कह लेना।'

आखिर हताश हो पवित्र को लौटना पड़ा।

---

(११)

कभी नहीं भवशंकर बाबू की बात कभी नहीं टल सकती। वे उन आदमियों में से नहीं हैं जो कहें कुछ और करें कुछ। उन्होंने जो एक बार कह दिया वह फिर पत्थर की लकीर है। वे जैसा कहेंगे वैसा ही करेंगे।

घर में विवाह की धूम मच गई। बड़ी धूम धाम का विवाह था। घर सम्बन्धी और आत्मीयों से भर गया था।

पवित्र के शुष्क मुख की ओर देख कर उमा के हृदय में शान्ति न थी। कुछ भी हो भवशंकर बाबू का आदेश टाला नहीं जा सकता! उन की बात का खण्डन करे इतनी क्षमता किस में है?

पवित्र के मलिन मुख की ओर देख कर वनमाली राय ने भवशंकर बाबू के सम्मुख जाने का साहस किया। तनिक माथा हिला कर आँ, ऊं, करते हुए उन्होंने कहा। 'बाबू एक बार पवित्र की ओर देख कर यह कार्य किया होता तो शायद

अच्छा होता उस के हृदय में शान्ति नहीं है । वह केवल छिपा कर—'

भवशंकर बाबू ने डपट कर कहा 'जाओ, जाओ तुम्हें उस की ओर से पैरवी करने की कोई आवश्यकता नहीं । पहिले जाकर अपने पुराने चरखे में तेल दो । वह मेरा लड़का है, उसका मैं जो चाहूं सो करूं, उस में दूसरों के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं ।'

हां, ठीक है । आज पवित्र केवल उनका ही लड़का है । परन्तु एक दिन उन्हीं दम्भी भवशंकर बाबू ने ही तो वनमाली-राय के दोनों हाथ अपने हाथ में ले, अपनी आँखों में आंसू भर दीन हो कातर स्वर में कहा था 'पवित्र केवल मेरा ही नहीं तुम्हारा भी लड़का है वनमाली । वह मुझ से अधिक तुम्हें पहिचानता है, तुम्हें स्नेह करता है—' हाय रे आज वे ही कह रहे हैं 'पवित्र पर किसी का अधिकार नहीं । उस के विषय में किसी को कुछ करना उचित नहीं ।' आज पवित्र केवल उनका ही हो गया । उस पर केवल वे ही शासन कर सकते हैं ।

खिन्न हो धीरे-धीरे वनमाली राय वहाँ से चले गए ।

दोपहर को खा पीकर जब वे बाहर निकलने लगे तो उमा ने अश्रु पूर्ण नेत्रों से कहा 'दादामणि ! एक बार पुत्र के मुख की ओर देखो तो ! उस ने तो खाना पीना एक दम बन्द कर दिया है । हंसी उसे भूल गई है—'

हठात् तीव्र हो भवशंकर बाबू ने पुकारा 'उमा'

उमा भयभीत हो एक ओर जा खड़ी हुई ।

उसी प्रकार तीव्र स्वर से भवशंकर बाबू ने कहा 'तुम सब लोगों को यह बात समझ रखनी चाहिए कि पवित्र के विषय में मैं कितना सतर्क हूं। वह मेरे लिए कितनी अमूल्य वस्तु है? तुम सभी मुझे उपदेश देने आते हो, मानों मैं उसकी बलि दे रहा हूं। देखो एक बात कान खोल कर सुन लो, समझ बूझ कर बात किया करो, जो मुंह में आवे उसे ही न बक दिया करो। तुम ने पवित्र को पाल पोस कर बड़ा किया है इसका मतलब यह तो नहीं कि अब वह मेरा कोई नहीं है। बाप बेटे के बीच तुम लोगों का दखल देना एक दम असंगत है, यह बात खूब समझ रक्खो।'

इस बात से उमा के हृदय पर भीषण आघात हुआ। वह सोचने लगी 'इसी समय हृदय छिन्न-भिन्न हो जाए तो अच्छा ही हो।' हाय रे नारी! तू ने अपार स्नेह ढाल कर पुरुष का निर्माण किया। उसे तू ने सर्वस्व दान किया। परन्तु बदले में तू ने क्या पाया कुछ पाने की बात तो दूर रही अंत में तेरा उस पर कुछ भी अधिकार न रहा। उस दिन भव-शंकर बाबू कहां थे जिस दिन शिशु पवित्र की माता ने इस बारह वर्ष की भगिनी के हाथ पवित्र को सौंए कर सुख से आंखें बन्द की थीं।

बालिका उमा ने जिस प्रकार शिशु को पाला यह केवल भगवान ही जान सकते हैं। न जाने कितनी रातें जगकर बीती। कितने ही दिनों तक निराहार रहना पड़ा। पवित्र के बीमार हो जाने पर कौन दुख भोगता था? भवशंकर तो औषधि और चिकित्सक की व्यवस्था कर निश्चिन्त हो जाते थे। उमा की आक्लान्त सेवा—उसे क्या भवशंकर देख पाते थे?

शायद नहीं। यदि देखते होते तो शायद आज ऐसी बात न कहते हाय रे नारी! तू केवल दान करना ही जानती है, परन्तु आज वह समस्त असार्थक हो गया।

'हे भगवन्! ऐसा ही हो। पिता पुत्र का मिलन हो। इस से अधिक और क्या हो सकता है?' उमा भी यही चाहती है। पवित्र की स्त्री आवे। वह उसे उसका संसार समझाकर अपने कर्तव्य से मुक्ति पा जाए।

घर में तिल रखने तक को भी स्थान शेप नहीं। बच्चों की 'चैं, में,' उनकी माताओं की, 'डपट,' कहीं गप, कहीं हंसी तो कहीं रोने का शब्द सुनाई दे रहा है। परन्तु पवित्र तितल्ले पर एक कोठरी में पड़ा रहता है। वहां से उतरना तो मानो उस ने छोड़ ही दिया है।

विवाह के तीन दिन बाकी रह गए। उमा बराण्डे में बैठी सम्बन्धियों से बातें कर रही थी। पवित्र नीचे नहीं उतरता इसी बात को लेकर एक स्त्री चिन्ता प्रकट कर रही थी। उमा ने जल्दी से उस का यह दोष ढकने के हेतु कहा 'क्या कहूं दीदी, लड़का शर्म से गड़ा जा रहा है। मैंने उसे समझाया कि ऐसा तो होता ही रहता है, फिर भी वह यही कहता है 'मौसी मुझे बाहर निकलने में लज्जा आती है।' क्या कहूं, वह तो एक दम पागल है। इतना पढ़ लिख गया तब भी उस का बचपन दूर न हुआ।'

स्त्रियों का दल हंसने लगा, पर उमा ने हंसी रोक कर गम्भीरता पूर्वक कहा 'सच कहती हूं वह ऐसा ही पागल है। जिस बात के लिए मना करो, वही जान बूझ कर करेगा।

उस से कहा 'मां को प्रणाम करो' तो वह मुझे प्रणाम कर बैठा ।' यह कहते २ उन्हें उस दिन की घटना स्मरण हो आई । जिस दिन वे पवित्र और उसकी स्त्री को भवशंकर बाबू के शयनगृह में प्रणाम कराने ले गई थी । इस से वे उदास हो गई ।

'मौसी—'

चकित हो उमा ने पीछे घूम कर देखा । सीढ़ियों पर पवित्र खड़ा था । उस का मुख तमतमा रहा था । आंखें गुड़हर के फूल की तरह लाल हो गई थीं; मानो फटी पड़ रही हों ।

भयभीत हो उमा ने कहा 'यह क्या पवित्र ?'

कम्पित कण्ठ से पवित्र ने उत्तर दिया 'इधर आओ मौसी कुछ कहना है ।'

'क्या बात है बेटा ?'

जल्दी से उमा उठ कर उस के पास गई । उनका हाथ पकड़ कर पवित्र ने कहा 'मेरे कमरे में तो चलो मौसी ।'

'यह क्या पवित्र तेरा हाथ इतना गरम क्यों है ? तेरा चेहरा ऐसा क्यों हो गया है, एं, तुझे क्या ज्वर हो गया है ? देखूं तो—'

तनिक हंस कर पवित्र ने उनका हाथ एक ओर हटाते हुए कहा 'इस समय कुछ देखने की आवश्यकता नहीं मौसी एक बार मेरे कमरे में चलो, फिर देख लेना । यहां सब लोगों को सूचित कर व्यर्थ ही कष्ट देना होगा ।'

उस में सीधे चला भी नहीं जाता था, फिर भी वह उमा को घसीटता हुआ अपने कमरे में ले गया। वहां उमा की गोद में फिर रख कर वह लेट गया। और हांफने लगा।

उमा ने उस के कोट के बटन खोल कर ज्वर देखा। सहसा उनका मुख विवर्ण हो गया। उन्होंने कहा 'ओह! तेरा शरीर तो जला जा रहा है पवित्र! इतना ज्वर होने पर भी तू मुझे नीचे बुलाने गया, यहीं से किसी को भेज कर क्या काम न चलता। तुझे ज्वर हो गया है यह सुन कर क्या मैं नीचे रह सकती थी?'

श्रान्त पवित्र ने उत्तर दिया 'केवल—केवल सब को व्यस्त कर—' बाधा दे उमा ने कहा 'केवल र क्या? इतना ज्वर हुआ है कि उस के ताप से मेरी गोदी भी जली जा रही है।'

'एक तकिया दो मौसी। तुम केवल मेरे सिर पर हाथ फेरती रहो।'

उमा ने व्यस्त हो उत्तर दिया 'नहीं बेटा क्या अपनी गोद के रहते हुए तुम्हें तकिया दे सकती हूं? आराम से तो लेटे हो? कुछ असुविधा तो नहीं हो रही हैं तुम्हें इसमें?'

तनिक इधर उधर सरक कर पवित्र ठीक तरह लेटकर बोला 'असुविधा! विलक्षण बात कहती हो मौसी! तुम्हारी गोद में शान्ति पाने के हेतु तो मैं स्वयं जाकर तुम्हें बुला लाया। तीन दिन बाद मेरा विवाह है। मेरी बीमारी की बात सुनकर लोग व्यग्र हो उठेंगे इसी कारण अब तक यह बात मैंने किसी से नहीं कही है। कल फिर ठीक हो जाऊंगा। रात भर में

बुखार कम हो जाएगा कुछ चिन्ता न करो मौसी।'

उद्विग्न हो मौसी ने कहा 'ऐसा ही हो बेटा, ऐसा ही हो। दामोदर करें रातभर में ज्वर दूर हो जाए तो कल मैं सवा पांच आने की सीरनी बांटूंगी।'

'यह गोदी अत्यन्त शान्तिदायक है मौसी पवित्र निश्चित भाव से लेटा रहा।'

इधर चार पांच साल तक उसे कभी ज्वर नहीं हुआ था। पवित्र जैसे २ ज्वर की यातना से छटपटा रहा था वैसे ही वैसे उमा भी व्यग्र हो रही थीं। वे जानती थीं कि पवित्र हृदय वेदना के कारण ही शरीर की अवहेलना कर रहा है। इसी कारण तो आज उसे ज्वर होगया। किसी तरह भी हो, यह ज्वर उतर जाए तो अच्छा है। कारण, तीन दिन पश्चात् ही तो उसका विवाह होना है।

पीड़ा के कारण छटपटाते-छटपटाते पवित्र की आंख लग गई। निद्रित अवस्था में ही वह 'पूर्वी-पूर्वी' कहकर चिल्ला उठा।

'हाय रे अभागा—'

उमा की आंखों से आंसू बहने लगे। 'धन्य है तू वेश्या कन्या। तेरा जीवन सार्थक है। एक मनुष्य के हृदय का अगाध प्रेम तुझे किस प्रकार वेष्टित किए हुए है। धन्य है तेरा नारी-जन्म। संसार में सब लोग तुझसे घृणा करते हैं। सभी ने तुझे निकाल बाहर किया, परन्तु जिसने तेरा पाणिग्रहण किया उसके हृदय में तू अब तक भी उसी प्रकार सजीव है।'

'पवित्र—बेटा—'

चिल्लाने के कारण उसकी नींद टूट गई थी। अपने उस प्रलाप से अत्यन्त लज्जित हो वह आंखें बन्द कर पड़ा रहा।

उसका यह भाव स्नेहमयी मौसी तुरन्त समझ गई। उसे अधिक लज्जित करना ठीक न समझ फिर उन्होंने उसे नहीं पुकारा।

रात को दस बजे अपने कमरे में आकर भवशंकर बाबू ने पवित्र को बुलवाने के हेतु नौकर भेजा। उस समय पवित्र सो रहा था। उमा उसके सिरहाने बैठी हुई धीरे-धीरे पंखा झल रही थी। उन्होंने नौकर से कहा 'जाकर कहदो कि पवित्र को भयंकर ज्वर हो आया है, वह इस समय नहीं आ सकता कल बुखार उतर जाने पर उन्हें जो कुछ कहना हो कहें।'

यह समाचार सुनकर भवशंकर बाबू चंचल हो उठे। अपने को संयत रखने की उन्होंने बहुत चेष्टा की, परन्तु वह सफल न हुए। भोजन करने के पश्चात् आज वे आराम करने न गए और सीधे पवित्र को देखने उसके कमरे की ओर चल दिए। और तीसरी मंजिल के एक कमरे के द्वार पर खड़े होकर उन्होंने पुकारा 'पवित्र—'

द्वार खोलकर उमा बाहर आई और चुपके से बोली 'दादा-मणि उसे न पुकारिए। वह सो गया है। बहुत यंत्रणा के पश्चात् अब उसकी तनिक आंख लगी है। उसे भयंकर ज्वर हो गया है।'

व्याकुल कण्ठ से भवशंकर बाबू ने पूछा 'ऐं क्या बहुत ज्वर होगया है ?'

उमा ने सिहर कर उत्तर दिया 'आह! वह बात न

पूछिए।'

व्यग्र हो भवशंकर बाबू ने कहा 'उसका सिर धुलादो उमा, तब तक मैं श्रीनाथ डाक्टर को बुलवा भेजता हूं।'

आज ही डाक्टर बुलाने की आवश्यकता नहीं दादामणि। भगवान न करे कभी उसकी आवश्यकता हो। मैंने सिर अच्छी तरह धो दिया है, उसी कारण तो वह सो गया है। आप चिन्ता न कीजिए, मैं उसके पास बैठी हूं। इसी प्रकार हृदय से लगाकर तो मैंने उसे इतना बड़ा किया है दादामणि!' यह कहते कहते उमा का कण्ठ भर आया।

भवशंकर बाबू लौट तो आए पर उन्हें किसी तरह भी शान्ति न हुई। दूसरे दिन प्रातःकाल ही उन्हें यह ज्ञान हुआ कि पवित्र का ज्वर केवल आधी डिग्री कम हुआ है, और अब १०४ डिग्री है।

माथा पकड़कर वे बैठ गए।

पवित्र का ज्वर कम होने के बजाय उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। भवशंकर बाबू ने व्याकुल हो पुकारा 'उमा—'

रुद्ध कंठ से उमा ने कहा 'दादामणि देख लीजिए आपकी उदासीनता के कारण ही आज लड़का हाथ से निकला जा रहा है। अब कहिए दादामणि आपके लिए कौन अधिक है समाज या सन्तान। पवित्र के मुख की ओर देख कर कहिए तो संतान से अधिक आपको समाज प्यारा है क्या? इसी कारण तो आप समाज का त्याग नहीं कर सकते हैं, और उसकी आज्ञा के वशीभूत होकर हंसते २ आप आज समाज के चरणों पर पुत्र की बलि दे रहे हैं दादामणि—' कहते २ बालक की भांति

उमा फूट फूट कर रोने लगी।

भवशंकर बाबू सिर नीचा किए बैठे रहे, न जाने कब उनकी आंखों में दो अश्रु विन्दु टपक पड़े।

बाहर आकर उन्होंने दीवान जी को बुलाकर कहा 'वनमाली वहाँ तार करदो विवाह नहीं हो सकता। पवित्र की अवस्था बहुत खराब है। और आज ही कलकत्ते जाकर डाक्टर ले आओ। पैसे की ओर न देखना। कैसे भी हो दो अच्छे डाक्टर आज ही ले आओ।'

वे पवित्र के निकट जा बैठे। पश्चात्ताप से आज उनका हृदय छिन्न विछिन्न हो रहा था।

---

[१२]

किसी तरह राम राम करते दिन कट रहे थे। जैसे जैसे दिन व्यतीत हो रहे थे नाना के विषय में पूर्वी की चिन्ता बढ़ती ही जाती थी।

प्रारम्भ में वह यह न समझ सकी कि नाना उसके सम्मुख औषधी न खाकर बाद में क्यों खाते हैं। किन्तु दो चार दिन पश्चात् ही उसे इसका कारण ज्ञात हो गया। एक दिन चुपचाप नाना जंगले से बाहर दवा फेंक रहे थे, इतने में घर में प्रवेश करती हुई पूर्वी ने यह देखलिया। उसको देखते ही वृद्ध ने हड़बड़ा कर हाथ पीछे खींच लिया।

'यह क्या हो रहा था नाना ?'

शय्या पर लेटकर वह हांपने लगे। उनके मुख से एक भी बात न निकली।

अभिमान, दुःख और क्षोभ से पूर्वी उच्छ्वसित हो रो-पड़ी 'तुम सब लोगों की यही इच्छा है कि मैं दर दर की भिखा-रिन बनूं। किसी ने तो दुत्कार कर निकाल दिया, किन्तु तुम यह मुख से स्पष्ट न कह कर अपने कामों से उसे प्रकट कर रहे हो।'

नाना ने उसका हाथ पकड़ कर पास बैठा लिया और कहा 'अच्छा सच कहो बेटी, यह पैसा पानी में ही तो जा रहा है। जो पक्षी उड़ जाने के लिए व्यस्त है, उसे इस टूटे पिंजरे में क्या तुम रोक सकने में समर्थ हो सकोगी, बोलो तो ? जाते समय शान्ति से जाने के उपाय करने के बजाय तुम मुझे दवा पिला रही हो। ना, बेटी, अब कड़वी दवा मेरे गले से नीचे नहीं उतरेगी। अब मैं दवा अधिक न खा सकूंगा।'

पूर्वी कुछ उत्तर न देकर चुपचाप बैठी रही। वह सोचने लगी यह सभी तो उसके भाग्य में लिखा था। उसने क्या नहीं देखा। जिस प्रकार सब की माँ होती है एक दिन उसकी भी तो मां थी। परन्तु भगवान ने उसे उठाकर ऐसा कर दिया कि मां नाम से भी उसे घृणा उत्पन्न हो गई। उसके पश्चात् नाना— जिन्होंने अपने हृदय का समस्त स्नेह ढालकर उसे मनुष्य बनाया था। जिनका असीम स्नेह पाकर वह माता पिता की ममता भूल गई थी। उसके पश्चात् देवतुल्य स्वामी, राजा के समान श्वशुर सभी तो उसे मिला था। लड़कियां जिन बातों की इच्छा करती हैं वे सभी तो उसे प्राप्त होगई थीं। आज फिर

किन पूर्व जन्मों के पापों के कारण वह उन्हें खो बैठी ? उस के अन्तिम आधार नाना भी आज महा प्रस्थान के पथ पर अग्रसर हो चुके हैं यह सब किन पापों के कारण—हे भगवान एकबार बोलो तो किन पापों के कारण धीरे २ पूर्वी का समस्त नष्ट होरहा है ? उसे इस भीषण दुख में सान्त्वना देने के हेतु तुमने कुछ भी न छोड़ा प्रभो ! क्या इन्हीं सब कष्टों को सहन करने के लिए तुमने पूर्वी का निर्माण किया था।

एक दीर्घ निश्वास लेकर पूर्वी ने पुकारा नाना—'

बहुत ठंड लग रही है पैरों पर कोई कपड़ा डाल दो।' कुछ दिनों तक तो थोड़ा २ बुखार आता रहा, परन्तु आज जलधर महाशय को भयंकर ज्वर हो आया। पूर्वी सब गृह कृत्य छोड़कर उनके पास आ बैठी।

सायंकाल को ज्वर उतरने पर वृद्ध ने आंखें खोलीं।

तू ने आज कुछ खाया है पूर्वी ?'

पूर्वी ने सिर हिलाकर उत्तर दिया 'खाया है नाना।'

जलधर बाबू ने अच्छी तरह पूर्वी का मुख देखकर अपने शिथिल हाथों से पूर्वी का हाथ अपनी छाती पर रखते हुए कहा 'यह मिथ्या तुम्हारे मुख से कैसे निकला पूर्वी ! तुम्हारा उतरा हुआ चेहरा ही कह रहा है कि आज तुमने कुछ नहीं खाया। मेरी आंखों में तुम धूल झोंकना चाहती थीं, परन्तु प्रयत्न निष्फल हुआ।'

पूर्वी चुपचाप बैठी रही।

'आज मुझे अधिक ज्वर हो गया है इस कारण तूने कुछ खाया भी नहीं ? वाह ! तू तो अच्छी पागल लड़की है। जाओ

भोजन कर आओ, उसके पश्चात् आ बैठना। बिल्ली को कुछ खिलाया है क्या ?

पूर्वी ने उत्तर दिया 'हां, उसे थोड़ा दूध पिला दिया है।'

उसका तो तुझे ध्यान रहा और अपना कुछ भी ध्यान नहीं। बस तूने तो मुझे परेशान कर डाला। उठ, पहले जाकर कुछ खा ले, फिर मेरे पास बैठना।

पूर्वी ने कहा 'आज तो कुछ बनाया ही नहीं नाना। एक ही दिन की तो बात है और कुछ खाकर काम चल जाएगा।'

उत्कण्ठित हो जलधर बाबू ने कहा 'और कुछ खाकर काम चला लेगी वाह! ऐसा भी कहीं होता है ? रसोई बनाकर मेरे सामने बैठकर खा, नहीं तो फिर मैं—तुझे मेरी कसम है ऐसा न कर।'

उनके हाथ पकड़ने पर पूर्वी को उठना ही पड़ा।आज पूर्वी को आहार करना ही चाहिए। शरीर की यंत्रणा बढ गई है। इसी से ज्ञानी वृद्ध समझ चुके थे कि प्राण-पखेरू उड़ने के हेतु छटपटा रहे हैं। माया बन्धन आसानी से नहीं टूट सकता इसी कारण तो इतना कष्ट हो रहा है। वे अपने हाथ से ही अपनी नाड़ी देखने लगे। परन्तु वह ढूंढे भी नहीं मिल रही थी। यह बात वे पूर्वी से किसी प्रकार न कह सके। थोड़ी देर में तो वह जान ही जाएगी, इससे पूर्व वह भोजन करले फिर जो अदृष्ट में लिखा है वह तो होकर ही रहेगा। 'नारायण! उसका आहार समाप्त होने तक रक्षा करो।'

मृत्यु यंत्रणा क्या होती है इसे पूर्वी नहीं जानती थी। आज तक किसी की अन्तिम घड़ियों में उसे पास बैठने का

अवसर नहीं आया था। असह्य यंत्रणा को दबाने की चेष्टा करते समय जलधर महाशय का मुख विकृत हो उठा। उनके मुख पर झुककर पूर्वी ने कहा 'ऐसा क्यों करते हो नाना! क्या हृदय में अत्यन्त व्यथा हो रही है? डाक्टर को बुलवा भेजूं?'

विकृत मुख से तनिक हंसने की चेष्टा कर जलधर महाशय ने कहा 'नहीं बेटा इसकी कुछ आवश्यकता नहीं। कुछ कष्ट नहीं हो रहा है। तुम्हारा भात तय्यार होगया पूर्वी?'

'बस हुआ जाता है।'

जलधर महाशय ने कहा 'एक बार जाकर देख तो आओ हो गया या नहीं, नहीं तो आंच बढ़ादो, जल्दी हो ज.एगा। लकड़ी पर तो बना रही हो?'

पूर्वी न उत्तर दिया 'हां नाना।'

'तो फिर जल्दी जा—'

उसके जाते ही जलधर महाशय की आँखों में आंसू बहने लगे।

'कुछ भी नहीं जानती। संसार से एक दम अनभिज्ञ है। उस ने बार २ मृत्यु का नाम सुना है। परन्तु उसका वास्तविक रूप उस ने कभी नहीं देखा। वह नहीं जानती कि काल मनुष्य को किस प्रकार ग्रसता है। नारायण। अन्त में इस प्रकार क्यों अविश्वास उत्पन्न कर दिया प्रभो?'

उन के जाने का समय निकट है। इस आह्वान की वे प्रतीक्षा ही कर रहे थे। इसी कारण तो उन्होंने इस अभागिनी की सब व्यवस्था कर दी थी, परन्तु भगवान्! तुमने यह क्या

किया। उसे इस प्रकार निराश्रित क्यों बना दिया ? उसका अन्तिम आधार यह घर है, परन्तु पेट की क्या व्यवस्था ? थोड़ी बहुत पेन्शन मिलती है, उनके मरने के बाद वह भी तो बन्द हो जाएगी। हाय नारायण ! अब उसके भाग्य में और क्या बदा है ?

जल्दी से पूर्वी भात खाकर लौट आई। उसने नाम मात्र को ही भोजन किया था। किसी प्रकार दो एक ग्रास गले के नीचे उतार दिए। आज उसका हृदय वेदना से परिपूर्ण था। चारों ओर से हा हा कार की ध्वनि उसे स्पष्ट सुनाई दे रही थी। न जाने कौन उस के हृदय में चिल्ला २ कर कह रहा था, 'आज तू ने सब कुछ खो दिया। अब तेरा क्या शेष है ?'

पड़ोस में ही डाक्टर बाबू रहते थे। इसीलिए पहिले नाना के पास न जाकर पूर्वी छत पर गई। डाक्टर बाबू की स्त्री से पूछने पर पता चला कि वे घर में ही हैं। एक बार उन्हें भेज देने का अनुरोध कर पूर्वी नाना के पास लौट आई।

'शेष पथ यात्री उसके आगमन की ही प्रतीक्षा कर रहा था। दोनों आंखें दरवाजे की ओर लगी हुई थी। पूर्वी के प्रवेश करते ही जलधर बाबू ने क्षीण कण्ठ से कहा 'थोड़ा पानी दो, बहुत प्यास—'

पूर्वी जल्दी से गिलास में पानी उड़ेल कर ले आई।

'यह कौनसा पानी है बेटी ? नल का या गंगा जल ?'

'नल का नाना।'

'जलधर महाशय ने सिर हिला कर कहा 'अब इस जल

की आवश्यकता नहीं है बेटी। गंगाजल ले आओ और मेरे मुख में डाल दो।'

पूर्वी ने गंगाजल लाकर उन के मुख में डाल दिया!

'आह! अत्यन्त तृप्ति—अत्यन्त तृप्ति हुई। पूर्वी मेरे पास आ बैठो बेटी! जिस से मैं तुम्हारा मुख अच्छी तरह देख सकूं।

उद्वेग व्याकुल कंठ से पूर्वी ने कहा 'आप ऐसा क्यों कहते हैं; नाना?'

जलधर बाबू के मृत्यु-मलिन मुख पर एक क्षीण हंसी की रेखा दौड़ गई। धीरे-धीरे उन्होंने कहा 'अब कुछ देर नहीं। मृत्यु धीरे २ मेरी ओर अग्रसर हो रही है। अपनी गोद में आश्रय देकर वह मुझे शान्ति प्रदान करेगी। आज उस का आकार मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा है।'

उसकी आंखें और कंठ शुष्क हो गया था। 'हाय भगवन्? मैं तो इस के पूर्व आंखों का समस्त जल बहा चुकी हूं। आज तुमने यह शुष्कता क्यों प्रदान की? हृदय फटा जा रहा है। एक बिन्दु—अश्रु दो देव! एक बिंदु अश्रु दो।'

वृद्ध हांफ रहे थे 'अब डाक्टर की क्या आवश्यकता है। बेटी! तुम नादान हो समझ नहीं पा रही हो। किन्तु मैं तो समझ रहा हूं। मेरी नाड़ी छूट गई है। हृदय में भीषण वेदना हो रही है। अब देर नहीं है। जाने का समय हो चुका है तुम्हें कहां छोड़ चला हूं, किस के हाथ सौंप रहा हूं। पवित्र—हाय—पूर्वी।'

असह्य यंत्रणा से वे छटपटाने लगे। आर्द्र कण्ठ से

पूर्वी ने पुकारा 'नाना—नाना—बोलो।'

जब डाक्टर बाबू आए तो अंतिम समय निकट आ पहुँचा था।

रोगी को देख कर डाक्टर लौट न सके। पड़ौसी वृद्ध के शेष समय तक वे वहीं बैठे रहे।

धीरे-धीरे वृद्ध की अंतिम घड़ी आ पहुँची। सिरहाने की ओर पूर्वी निश्चल बैठी थी।

शान्त कण्ठ से डाक्टर बाबू ने कहा 'इस तरह बैठे रहने से काम न चलेगा बेटी। तुम बिस्तर को एक ओर पकड़ लो और मैं दूसरी ओर से पकड़ता हूं। इस प्रकार हम इन्हें नीचे उतार ले चलें। इस के पश्चात् जो कुछ करना होगा वह मैं सब कुछ कर लूंगा।'

विकृत कण्ठ से पूर्वी ने उत्तर दिया 'कुछ आवश्यकता तो नहीं बाबा, नाना को इसी गृह मे अन्तिम श्वास लेने दो। इस समय उनके शरीर को हिला डुला कर अधिक कष्ट देने से क्या लाभ?'

'पूर्वी—एक बार हरिनाम—'

मुंह से शब्द नहीं निकल रहा था फिर भी वृद्ध के होश ठिकाने थे।

रुद्ध कण्ठ से पूर्वी ने जलधर बाबू के कान में हरिनाम का उच्चारण किया। सुनते २ वृद्ध की आंखें न जाने कब मुंद गईं। संसार में केवल प्रमाण स्वरूप उनकी निश्चल देह पड़ी रह गई। उनके प्राण न जाने कब अनन्त पथ की ओर प्रयाण कर गए।

[१३]

दुख, वेदना और भय पाकर पूर्वी जिस नाना की स्नेह मय गोद में आश्रय ग्रहण करती थी हाय ! आज वह कहां हैं। इस संसार में उसे केवल अपना कहने के लिए नाना ही थे। जिनका स्नेह पाकर वह इतनी बड़ी हुई थी वे आज नहीं हैं। आज केवल पूर्वी छिन्नलता की तरह पड़ी हुई है।

किन्तु काल और स्रोत किसी की प्रतीक्षा नहीं करते। वे तो अपनी अविराम गति से चले जा रहे हैं। दिनो पश्चात दिन, सप्ताह पश्चात सप्ताह और इसी प्रकार मास भी बीतने लगे।

हाय रे पतिता कन्या ! समस्त खोकर भी आज तू संसार में किस के लिए जीवित है ? भीषण ताप से मुर्भा जाने पर भी हे पुष्प तुम किस हेतु वृक्ष पर अपना अस्तित्व कायम रखना चाहते हो ? भड़कर पृथ्वी पर गिर पड़ो; मिट्टी में मिलकर मिट्टी हो जाओ।

काज नहीं, कर्म नहीं, जीवन का कुछ भी उद्देश नहीं, जीवन से क्या लाभ ? कर्म हीन उद्देश हीन जीवन को क्या क्षण भर में ही शेष नहीं किया जा सकता ?

पूर्वी की यही नित्य की भावना थी। एक दो क्षण की ही नहीं वह तो उस की चिर-संगिनी ही बन चुकी थी। एक पड़ौसी डाक्टर बाबू और उन की स्त्री ही उस के इस दुस्समय में उसे अपनी कन्या की तरह स्नेह करते थे। इस अभागिनी का उन्होंने समस्त जीवन वृत्तान्त सुना था, और वे

उसे सुन कर अत्यन्त दुखी हुए थे। उनके ही सम्मुख पूर्वी छोटी से बड़ी हुई थी इसी कारण वे इसके स्वभाव से पूर्णतया परिचित थे।

उस दिन अचानक एक आदमी डाक्टर बाबू को बुलाने आ पहुँचा, कारण नूरपुर के ज़मीदार का पुत्र सांघातिक रोग से पीड़ित था उसे देखने उन्हें आज ही जाना होगा।

डाक्टर बाबू की स्त्री पूर्वी को नित्य ही अपने घर बुला लाती और विशेष कारण होने पर ही उसे अपने घर जाने देती कारण कि वह सुन्दरी युवती थी और मौहल्ले में बदमाशों का भी अभाव न था।

नूरपुर का समाचार सुनते ही पूर्वी का मुंह उतर गया। उसकी खड़े होने की शक्ति नष्ट हो गई और धीरे-धीरे पृथ्वी पर बैठ गई।

गम्भीर हो डाक्टर बाबू ने कहा 'इतनी हताश क्यों होती हो पूर्वी, धैर्य धारण करो। मैं जो कहता हूं उसे सुनो, चलोगी मेरे साथ ?'

फिर उसी जगह—उसी समाज की निन्दा, भवशंकर बाबू की ताड़ना—इतने दिन बाद भी तो उस घटना को वह न भुला सकी।

उसने रुद्ध कण्ठ से उत्तर दिया 'नहीं बाबा।'

डाक्टर बाबू ने उसी प्रकार स्नेह पूर्वक पूछा 'क्यों न जाओगी बेटी ?'

'अब और मैं उन के सम्मुख किस मुंह से जाऊं बाबा ? कई वर्ष पूर्व की वह घटना अब भी मेरे हृदय पर ज्वलन्त

अक्षरों में अंकित है। उस ताड़ना के पश्चात भी मैं क्या मुंह लेकर जाऊंगी बाबा।' यह कहते २ पूर्वी का गला भर आया।

डाक्टर बाबू ने क्षणभर सोच कर कहा 'किन्तु यह भी तो सोचो मां, कि पवित्र—तुम्हारा स्वामी, रोग शैय्या पर पड़ा है। जिस व्यक्ति ने आकर मुझे यह समाचार दिया है उस के निरर्थक बकने पर भी मैं उस से बहुत सी मतलब की बातें जान ली हैं। उसे तुम्हारे पास लाने की मैंने चेष्टा भी की थी किन्तु वह हठात् बच्चों की तरह रो कर बोला 'क्षमा कीजिए, मां के सम्मुख मैं मुख दिखाने योग्य नहीं हूं। भगवान यदि वैसा दिन लाएंगे तो मैं ही स्वयं आकर उसे ले जाऊंगा और यदि पवित्र का कुछ अनिष्ट हो गया तो उसका उस घर का समस्त संपर्क ही टूट जाएगा और फिर उसे वहाँ जाने की कुछ आवश्यकता ही न रहेगी।'

पूर्वी दोनों हाथों से मुंह ढांप कर रोने लगी। 'बाबा—उन्हीं की बात रहने दो। सचमुच ही यदि भगवान कृपा कर वह दिन दिखाएंगे तो तभी मैं वहां जाऊंगी, अभी समय नहीं हुआ।'

घर आकर वह बिस्तरे पर लेट गई और फूट फूट कर रोने लगी।

सत्य ही पवित्र की अवस्था खराब हुई जा रही थी। इस समय उस का समस्त ज्ञान लुप्त हो गया था। वह बार २ पूर्वी को पुकार कर उस से क्षमा-याचना कर रहा था। कठ-पुतली की तरह निश्चल बैठे हुए भवशंकर बाबू अपने कर्मों का फल देख रहे थे।

कलकत्ते से डाक्टर और वनमाली दोनों आ पहुँचे। जिस समय प्रकाश बोस पवित्र को देख रहे थे वह सोया हुआ था।

संयत स्वर से प्रकाश बोस ने कहा "आप ने अपने हाथों ही अपने पैर पर कुल्हाड़ी मार ली है भवशंकर बाबू। जान बूझ कर ही आप यह सर्वनाश कर रहे हैं। मेरी बात सुन कर आप क्रोधित न होइएगा। मुझे अपना हितू समझिए। आप मुझे नहीं पहिचानते हैं किन्तु पवित्र मुझे अच्छी तरह पहिचानता है और उसी से मैं आप का कुछ परिचय पा चुका हूं। धर्म के नाम पर आप अधर्म कर रहे हैं और उसके फल स्वरूप दो प्राणियों की हत्या हो रही है। अपने लड़के को आप ही मार रहे हैं भवशंकर बाबू। यह किस हेतु? समाज की ओर देख कर? समाज के लिए आज आप सर्वस्व खो रहे हैं। एक बात पूछता हूं बाबू, हमारा सनातन हिन्दू धर्म क्या इतना अनुदार है? ऐसे कुसंस्कारों से परिपूर्ण है? यही सनातन हिन्दू धर्म इस से पूर्व तो इतना संकीर्ण नहीं था। किन्तु आप जैसे संचालकों के हाथ में पड़ कर इसकी न जाने कितनी दुर्दशा हो रही है। जिन्हें पाकर समाज गौरव कर सकता था उन्हीं लोगों को आप लोग केवल एक सामान्य सी त्रुटि पर ही बहिष्कृत कर देते हैं, और इसका परिणाम यह हो रहा है कि दूसरे समाज उन्हें पाकर शक्तिशाली बनते जा रहे हैं। इसी प्रकार हमारा समाज अच्छे लोगों को त्याग कर बुरों को हृदय में स्थान दे रहा है और इसी कारण दिनों दिन हमारे कुसंस्कारों का भाण्डार बढ़ता ही जाता है। समाज की आप रक्षा करने गए, जिससे वेश्या कन्या समाज में प्रवेश न कर सके किन्तु एक बार हृदय नेत्रों को खोल कर तो देखिए।

इसी समाज में न जाने कितनी जारज संताने सम्मान से जीवन व्यतीत कर रही हैं और जब तक यह बात प्रकट नहीं होती, उनकी खूब चैन से कटती है, फिर ऐसी बातें बहुत कम प्रकट होती हैं। यदि आप धर्म की दुहाई दें, तो क्या उसे पुत्र वधू रूप में ग्रहण करने से ही आप का धर्म नष्ट हो जाएगा? धर्म का आप क्या अर्थ करते हैं भवशंकर बाबू? आज मैं यही बात आप से पूंछना चाहता हूं? पाप के नाम से आप डरते हैं, परन्तु इन दोनों जीवों की हत्या करना क्या पाप नहीं है? आप का पितृत्व इसी में सार्थक होगा कि आप अपनी एक मात्र संतान को समाज की कल्पित वेदी पर बलि कर दें? छी, छी! अब आप चुप होकर सोचते हैं, इधर लड़का अनन्त पथ की ओर अग्रसर हो रहा है। तो क्या उसे आप अन्तिम हरिनाम सुनाना ही चाहते हैं? क्या यही अब पिता का कर्तव्य शेष रह गया है? यदि मेरा एकलौता बेटा ऐसा कार्य करता तो—सच कहता हूं बाबू; मैं उसे हृदय से क्षमा करता। कारण यथार्थ ही उस ने मनुष्य का कर्तव्य किया है। एक व्यक्ति को उस ने जगत का सुख और आह्लाद भोग करने का अधिकार दिया है। उसे अपनाकर उसका जीवन सार्थक बनाया है। ऐसे महत कार्य करने वाले संसार में बहुत थोड़े व्यक्ति हैं भवशंकर बाबू। ऐसे कार्य से धर्म नहीं जाता। भगवान प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हैं।'

डाक्टर की इस प्रताड़ना से--निर्मम भवशंकर बाबू का हृदय विगलित हो गया। रुद्ध कण्ठ से उन्होंने पुकारा 'डाक्टर बाबू—'

प्रकाश बोस व्यग्रता को दमन करते हुए आगे कहने लगे। 'समझ रहा हूं, आप को पश्चात्ताप हो रहा है। अब

भी लड़के का जीवन आप के हाथ में है भवशंकर बाबू। मुझे आज्ञा दीजिए पूर्वी को मैं अभी ले आऊंगा। वह मेरे ही घर रहती है। आप बड़े भाग्यवान हैं इसी कारण ऐसी पुत्र वधू आप को प्राप्त हुई है। आप समझते हैं? पवित्र के हृदय पर भयंकर आघात हुआ है और इस समय पूर्वी के सिवाय उसे और कोई नहीं बचा सकता। यदि आप पुत्र को बचाना चाहते हैं, भगवान को प्रसन्न करना चाहते हैं तो उसे वेश्या कन्या समझ कर घृणा न कीजिए। उसे सहर्ष स्वीकार कीजिए। समाज आप की मुट्ठी में है। वह आप का कुछ नहीं कर सकता। यदि वह कुछ कहे भी तो उसे बकने दीजिए। जो समाज इतना अनुदार है, उसे त्याग देना ही अच्छा है। ईश्वर सुप्त नहीं जागृत है। वह आप के कृत्यों का स्वयं विचार कर लेगा। कहिए? आज्ञा दीजिए? कल प्रातःकाल ही मैं पूर्वी को यहां ले आऊंगा।'

भवशंकर बाबू ने डाक्टर बाबू के दोनों हाथ अपने हाथ में लेकर गद् गद् कण्ठ से कहा 'ऐसा ही कीजिए डाक्टर बाबू! पूर्वी को ले आइए। जिस मुंह से मैंने उस सती, लक्ष्मी को इस घर से निकाल दिया था, उसी मुख से आज मैं उसका आह्वान कैसे करूं? पुत्र से हाथ धोने बैठा हूं, फिर भी संकोच के कारण उस के सम्मुख जाने का मुझे साहस नहीं होता। आप उसे ले आइए। मेरे पवित्र को बचाइए। पवित्र के सिवाय मेरा इस संसार में कुछ भी नहीं है डाक्टर बाबू? पवित्र—' इस के आगे भवशंकर बाबू के मुख से एक भी शब्द न निकला।

रात्री को डाक्टर बाबू पूर्वी को लेने कलकत्ते चले गए।

[१४]

शंकित हृदय और कांपते हुए पैरों से आज पांच वर्ष पश्चात् नूरपुर में पूर्वी पालकी से उतरी।

'बहू—'

बहुत काल पश्चात् यह किस का आदर पूर्ण आह्वान है, यह देखने के लिए पूर्वी ने अवगुंठन हटाया। सम्मुख उमा खड़ी थी।

'मां—'

उमा के चरणों पर वह लोट गई। उमा ने उसे उठाकर हृदय से लगाते हुए गद् गद् कंठ से कहा 'आ गई बेटी! आओ। अपने सौभाग्य के बल पर आज पवित्र को बचालो।'

उच्छ्वसित हो वे रो उठीं।

सब ओर दुख का साम्राज्य था। सभी चुप थे। यह देख कर पूर्वी हांफ उठी 'वे कैसे हैं मां?'

'कौन—पवित्र? देखोगी बेटी—आकर देखोगी?'

सत्रह दिन बीमारी के साथ सतत युद्ध करने के कारण आज प्रातःकाल से पवित्र शिथिल हो नीरव पड़ा हुआ है। वह जीवित है यह बात कभी २ केवल उसके सिर हिलाने से ही जानी जाती है।

भवशंकर बाबू काष्ठवत् पुत्र के सिरहाने बैठे हुए थे। उनके दिए हुए कठोर दण्ड ने पुत्र का हृदय विदीर्ण कर दिया है

फिर भी उस ने कुछ नहीं कहा, वरंच उस दण्ड को वह सहन कर सहर्ष मृत्यु का आलिंगन कर रहा है। क्या यह बात पिता के लिए कम दुख की नहीं है कि वे स्वयं ही पुत्र-हत्या कर रहे हैं। डाक्टर कह रहे थे कि यह कोई साधारण बात नहीं है, इस से तो अच्छा था कि वे उसे एक बार ही गला घोंट कर मार डालते। इस प्रकार तिल-तिल जलाकर आखिर उन्होंने उसे मृत्यु मुख में ढकेल ही दिया।

आज किसका विनाश हो रहा है? उनका या समाज का? हृदय किस का टूक-टूक हुआ जा रहा है?

कौन उत्तर देगा?

'पवित्र! मेरे लाडले पवित्र एक बार तो आंखें खोल कर देखो। बेटा! अपने चिरपराधी, चिरपातकी पिता को एक बार तो क्षमा करते जाओ। इस प्रकार हृदय पर वज्र प्रहार न करो!'

उच्छ्वसित हो पुत्र के सिर पर हाथ फेरते हुए पागल की तरह उन्होंने पुकारा 'अरे बेटा! मैंने जो भूल की है इसका मैं संशोधन करूँगा। तेरे हृदय में जो भीषण चोट लगी है उस पर मैं ही शान्ति का प्रलेप करूंगा। पवित्र! पवित्र! मेरे जीवनाधिक एक बार मेरी ओर देखो तो। अपने अभागे पिता की बात सुनते जाओ। अरे उसे इस प्रकार आग में न ढकेलो। हाय नारायण—'

वृद्ध धाड़ मार मार कर रोने लगे 'हे परमात्मा, मैंने जो पाप किया है उसका बदला और किसी रूप में दो, परन्तु पुत्र को इस प्रकार न छीनो। मेरे शेष जीवन को चिता की अग्नि पर तिल तिल न जलाना प्रभो! दामोदर मैं अपने हाथों से

तो तुम्हारी पूजा करता हूं। इन्हीं हाथों से तुम्हारे शिर पर तुलसी दल चढ़ाता हूं। वह सब क्या इसीलिए ठाकुर! मेरी एकान्त भक्ति का क्या यही पुरस्कार है? तो फिर क्या तुम नहीं हो, या हो तो केवल पाषाण मात्र? यदि पवित्र को कुछ हो जाएगा तो जिन हाथों से मैं बचपन ही से तुम्हारी पूजा करता आया हूं, जिस मुख से तुम्हारा सदा नाम स्मरण करता रहा हूं, उसी मुख से समस्त जगत में ढिंढोरा पीटता फिरूंगा कि 'कुछ नहीं, भगवान कुछ नहीं। देवता का कुछ भी अस्तित्व नहीं है।' मेरी रक्षा करो—तुम्हारे अस्तित्व में मेरा विश्वास अटल रहे नारायण!'

दरवाजे के बाहर उमा खड़ी थी। यह सब देख उनकी आंखों से टप २ आँसू टपकने लगे। परन्तु पूर्वी शून्यवत् खड़ी रही उसकी आंखों में एक बूंद आंसू भी न दिखाई दिया।

दादामणि—'

चौंक कर भवशंकर बाबू ने द्वार की ओर देखा।

'दादामणि आपकी पुत्रवधू आई है। पूर्वी! इधर आओ बेटी अन्दर आओ।'

पूर्वी भवशंकर बाबू के सम्मुख आज अवगुण्ठन हीन खड़ी थी। उसका अनिन्द्य सुन्दर मुख स्पष्ट दिखाई दे रहा था। वह रोई नहीं, कारण उस समय उसकी समस्त चेतना लुप्त हो गई थी। उसके समस्त विचार उस के मुख पर प्रति-विम्बित हो रहे थे, जिसे देख कर भवशंकर बाबू का हृदय कांप उठा—आह! अत्यन्त अभागिनी—'

बहू—बहू रानी—'

उनका यह पूर्वा के प्रति प्रथम संबोधन था। उनका कण्ठ कांप गया 'बैठो बेटी यहाँ बैठो। आज तुम्हारी कठोर परीक्षा का दिवस है। जिस प्रकार सावित्री ने अपने मृत पति को बचा लिया था, उसी प्रकार तुम्हें भी आज पवित्र को लौटा लेना होगा। आज यथार्थ ही मैं पवित्र को तुम्हें सौंपता हूं। आज तक मैंने उसे किसी को नहीं सौंपा, यहाँ तक कि उमा को भी नहीं; उसी को आज तुम्हारे हाथ सौंपता हूं। देखूंगा- यदि तुम वास्तव में ही सती हो तो पवित्र को लौटा सकोगी। आज इसी स्थान पर तुम्हें छोड़े जा रहा हूं। कल प्रातःकाल ही मैं सुनूं कि तुम पवित्र को लौटा लाई हो। आओ बेटी—इसी जगह बैठ जाओ।'

ज्ञान-शून्य वृद्ध ने पूर्वा का हाथ पकड़ कर उसे पवित्र के पास बैठा दिया और वे स्वयं धीरे-धीरे बाहर निकल गए।

समस्त दिवस और रात्रि उन की ठाकुर द्वारे ही में कट गई। वे रोते थे और यही रट लगाए हुए थे 'ठाकुर—विश्वास न खोने देना। मेरा विश्वास अटल रहे। मुझे नर पिशाच न न बनाना नारायण। मैं जैसा हूं वैसा ही मुझे रहने दो।'

डाक्टर लोग आज यहीं रहे, कारण आज की रात्री सब से भयंकर थी। यदि किसी तरह आज की रात्रि टल जाए तो समझना चाहिए कि पवित्र बच जाएगा।

समस्त रात्रि वृद्ध ने जग कर काटी।

'ऐसा ज्ञात होता है, कोई रो रहा है। वही तो उमा चिल्ला रही है।' 'पवित्र—पवित्र—'

ऊषा के मधुर प्रकाश ने घर में प्रवेश किया साथ ही किसी

ने आनन्द से चिल्ला कर पुकारा 'भवशंकर बाबू ! वे कहां हैं ?'

किसी ने उत्तर दिया 'वे ठाकुर द्वारे में हैं ।'

डाक्टर बोस ने द्वार पर हाथ थपथपाते हुए पुकारा 'जल्दी किवाड़ खोलिए बाबू, देर न कीजिए ।'

शीघ्रता से द्वार खोलते हुए कंपित कंठ से पिता ने प्रश्न किया 'क्या खबर है डाक्टर बाबू ?'

'शुभ समाचार है । पवित्र बच गया । अब डर का कोई कारण नहीं—' यह कहते-कहते आनन्दातिरेक के कारण प्रसन्नता पूर्वक डाक्टर बोस ने भवशंकर बाबू का अलिंगन किया ।

भवशंकर बाबू की दोनों आंखों से अश्रु बहने लगे । उन्होंने पूंछा 'सत्य कह रहे हो डाक्टर बाबू ?'

'पिता के सम्मुख पुत्र के विषय में झूठ बोलने का मैं साहस नहीं कर सकता भवशंकर बाबू ।'

'नारायण—' पृथ्वी पर साष्टाङ्ग प्रणाम कर भवशंकर बाबू ने कहा 'तो तुम सत्य देवता हो । आज तुमने अत्यन्त कठिन परीक्षा ली थी प्रभो ! मैं कर्तव्य पथ से विचलित हो गया था । मेरे हृदय में सन्देह उत्पन्न हो—गया था । चिराश्रित दास की इतनी कठिन परीक्षा लेने की क्या आवश्यकता थी भगवान् ! समझ गया देव ! मुझे धर्म का अहंकार हो गया था । मैं समाज से स्पर्धा करने लगा था । मुझे धूल से भी अधिक निकृष्ट होना पड़ेगा । आत्म मर्यादा के गर्व में मैं समस्त भूल गया था, परन्तु आज इस भीषण आघात से तुमने मुझे सावधान कर दिया ।'

अस्थिर और चंचल पद से वे पवित्र के कमरे की ओर चले। सम्मुख ही हास्य मयी उमा खड़ी थीं।

व्यग्रता से उन्होंने पूछा 'पवित्र अच्छा हो गया उमा? होश में तो है? बात करता है?'

उमा ने उत्तर दिया 'हाँ इस समय वह अच्छी तरह बात कर रहा है।'

'बहू कहां है उमा?'

'वह उसी के पास बैठी हुई है।'

'बहू—बहू—'

भवशंकर बाबू के गृह में प्रवेश करते ही पूर्वी एक ओर उठ खड़ी हुई।

पवित्र के शांत और प्रसन्न मुख की ओर देख कर भवशंकर बाबू के हृदय में साहस और बल का संचार हुआ। उन्होंने पूर्वी के दोनों हाथ पकड़ कर गद् गद् कंठ से कहा 'लक्ष्मी! तुम सत्य ही सती हो इसी कारण तो आज तुम सावित्री के समान अपने मृत स्वामी को लौटा लाने में समर्थ हुईं। पवित्र को फिर तुम ने मुझ से मिला दिया। बेटी! पांच वर्ष पूर्व जो कुछ मैंने किया या कहा था, उसे भूल जाओ। आज तुम्हीं मेरे गृह को उज्ज्वल करो। तुम्हारे मधुर हास्य से मेरा समस्त गृह मुखरित हो उठे। पवित्र को मैं तुम्हें दान कर चुका हूं। इस पर अब केवल तुम्हारा ही अधिकार है। आशीर्वाद देता हूं कि तुम चिर आयुष्मती होवो।

सजल नेत्रों से पूर्वी ने उनके चरणों की धूलि ग्रहण की।

आज इस विपुल आनन्द में उसके हृदय में एक भीषण व्यथा जाग उठी, 'नाना—नाना— आज इस शुभ मिलन के अवसर पर तुम कहां हो।'

वृद्ध इस मधुर मिलन को न देख सके यह खेद का विषय है। जिस समय उनकी पूर्वी को समस्त सुख प्राप्त हो गया था, उस समय वे परलोक में थे। किन्तु हमारा विश्वास है कि उनकी परलोक गत आत्मा ने ही मिलन की ये घड़ियां ला जुटाईं। पूर्वी के हेतु वे जीवित रहकर भी शान्ति न प्राप्त कर सके और मरकर भी उनकी आत्मा को शान्ति न मिली, परन्तु अब उनकी आत्मा को अवश्य मुक्ति मिली होगी।

॥ समाप्त ॥